❀ ओ३म् ❀

aryamantavya.in

कुलियात आर्य मुसाफ़िर

(हिन्दी अनुवाद)

आर्य पथिक ग्रन्थ-माला

पहला भाग

दूसरा भाग

लेखक

अमर हुतात्मा धर्मवीर पण्डित लेखराम आर्यपथिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
३५ महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान
नई दिल्ली-२

प्रथम संस्करण मूल्य 20/-

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

● प्रकाशक—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान
नई दिल्ली-२

अनुवाद कार्य का विवरण

श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री पृष्ठ १—११७ तथा २२२—४०२

श्री पं० शान्ति प्रकाश जी — पृष्ठ ११८—२२१

मुद्रक

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

विषय-सूची

क्र० संख्या	आरम्भिक विषय	पृष्ठ
१	—भूमिका-स्व० श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की लेखनी से	१
२	—आर्य मुसाफ़िर जी का संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त—स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी के शब्दों में	८
३	—सती का शिक्षा दायक जीवन—स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी के उद्गार ...	१५

कुलियात (पहला भाग)

१	—सृष्टि का इतिहास (पहला भाग)	२५
२	—सृष्टि का इतिहास (दूसरा भाग)	६५
३	—श्री कृष्ण जी का जीवन-चरित्र	११८
४	—स्त्री शिक्षा	१३५
५	—आर्य हिन्दु और नमस्ते की खोज	१७८
६	—मुर्दा अवश्य जलाना चाहिये	१९३
७	—पतितोद्धार	२०५
८	—धर्म प्रचार	२१६
९	—पुनर्जन्म प्रमाण (पहला भाग)	२२२

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

(द्वितीय भाग) विषय-सूची

क्रम सं०		पृ० सं०
१.	पुनर्जन्म विस्तृत खोज (प्रथम प्रकरण)	१
२.	वेदशास्त्र से पुनर्जन्म सिद्धि (प्रथम अध्याय)	९
३.	आवागवन की साक्षियाँ	२५
४.	पारसीमत और पुनर्जन्म (दूसरा अध्याय)	३०
५.	बुधमत और पुनर्जन्म (तीसरा अध्याय)	३६
६.	विभिन्न देशों के विद्वानों और दार्शनिकों की सम्मतियाँ (चतुर्थाध्याय)	३८
७.	बाइबल से पुनर्जन्म सिद्धि (पंचमाध्याय)	७४
८.	कुरआन से पुनर्जन्मसिद्धि (षष्ठाध्याय)	७८
९.	पुनर्जन्म पर इसलामी विद्वानों की सम्मितियां (सप्तमाध्याय)	८९
१०	पुनर्जन्म पर कबीर जी व बाबा नानक जी (अष्टमाध्याय)	१०५
११.	श्री स्वामी दयानन्द जी के पुनर्जन्म पर शास्त्रार्थ (नवमाध्याय)	११४
१२.	पुराण किसने बनाये (द्वितीय भाग)	१३८
१३.	सांच को आँच नहीं	१६१
१४.	आर्यसमाज में शान्ति का सत्योपाय और रामचन्द्र जी का सच्चा दर्शन (प्रथम भाग)	१९१
१५.	मांस खाना पाप है (दूसरा भाग) और रामचन्द्र जी का सच्चा दर्शन	२१०
१६.	कृश्चन मत दर्पण	२२५
१७.	(प्रथम अध्याय)—मसीह खुदा का बेटा नहीं, यूसुफ नज्जार का पुत्र था	२२७
१८.	(दूसरा अध्याय)—मसीह निष्पाप नहीं, किन्तु पापयुक्त था	२४९
१९.	(तीसरा अध्याय)—मसीह के चमत्कार	२५९
२०.	(च० अ०)—बाइबल का खुदा न दयालु न न्यायकारी किन्तु अत्याचारी है	५६९
२१.	(पंचम अध्याय)—ईसाई मत संसार में कैसे फैला	२७८
२२.	(षष्ठ अध्याय)—तसलीस और उसका आरम्भ	२९१
२३.	(सप्तम अध्याय)—ईसाई सम्प्रदायों और बाइबल का अन्वेषण	२९९
२४.	(अष्टम अध्याय)—ईस्वी घटनाएं	३११
२५.	सदाकत इलहाम—ईश्वर ज्ञान की सत्यता	३२४
२६.	सत्यधर्म का सन्देश (भूमिका)	३३३
२७.	निजायत की असली तारीफ—मोक्ष का वास्तविक लक्षण	३६०
२८.	सदाकते ऋग्वेद—ऋग्वेद की सत्यता	३६६
२९.	नियोग का मन्तव्य	३७९
३०.	सत्य सिद्धान्त और आर्यसमाज की शिक्षा अर्थात् पक्षपाती पादरियों की नासमझी का यथार्थ निदान (प्रथम व्याख्यान का उत्तर)	३९६
	व्याख्यान नं० २ का उत्तर	४२५
	व्याख्यान नं० ३ का उत्तर	४३३
	व्याख्यान नं० ४ का उत्तर	४४१
	व्याख्यान नं० ५ का उत्तर	४५४
	व्याख्यान नं० ६ का उत्तर	४१६

भूल सुधार पृ० २११ से २१६ तक १११ से ११६ छप गया। सुधार कर लेवें।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

किञ्चिदावेदनम्

कुलियात आर्य मुसाफिर आर्य समाज के मूर्धन्य बलिभूत शहीदे अकबर स्वनाम धन्य श्री प० लेखराम थी आर्य पथिक के छोटे बड़े ग्रंथों का अपूर्व संग्रह है । जो उर्दू भाषा में लिखा गया था। किन्तु इस के हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता निर्विवाद है। इस के लिए भारत विभाजन के पश्चात् मैं मान्या पंचनदीय आर्य प्रतिनिधि सभा से नम्र निवेदन करता चला आया। अन्ततः वह आचार्य भगवान् देव जी तथा श्री सिद्धांती जी आदि सभाधिकारियों की कृपा से स्वीकृत हुआ। समस्या यह थी कि इस का अनुवाद किस से कराया जाये। सभा की दृष्टि मुझ पर थी। किन्तु मैं शास्त्रार्थों और सभा के वेद प्रचाराधिष्ठाता के अत्यावश्यक कार्य पर नियुक्त था। अतः देर पर देर होती चली गई । अन्ततः यह शुभ कार्य श्री पं० जगत्कुमार जी शास्त्री प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् के सुपुर्द किया गया। पुनः श्री पं० जगदीश चन्द्र जी शास्त्री ने भी कुछ समय कार्य किया।

अन्ततः यह कार्य सभा ने मुझे सौंपा और प्रथम जिल्द का प्रकाशन सम्पूर्ण हुआ। तदुपरान्त अब यह दूसरी जिल्द जनता के सम्मुख करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि मेरा परिश्रम सफल हुआ। इस जटिल तथा गूढ़ महा ग्रंथ का अनुवाद कार्य कोई सरल नहीं। अनेक दोषों की सम्भावना को मानता हुआ मैं सभी से प्रार्थी हूं कि सुझाव दें जिस से आगामी प्रकाशन में परिष्कृति सम्भव हो सके।

सम्पादन् का कठिनतम महान् कार्य श्री पं० जगदेवसिंह सिद्धान्ती जी ने मेरी तथा सभा की प्रार्थना पर सम्भाला। इस के साथ ही अन्तिम प्रूफ़ देखने की समस्या थी जिसके लिये प्रायः अरबी-फ़ारसी के प्रमाण संगृहीत होने से इन का प्रूफ़ संशोधन कष्ट साध्य था। अतः आर्य समाज के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० हरिदेव जी सिद्धांती भूषण महोपदेशक सभा की कृपा से यह कठिन कार्य सरल हो गया। अन्य सभी सहयोगियों का भी धन्यवाद इस अद्भुत महान् ग्रंथ के प्रकाशनार्थ मान्या सभा का भी पुनः २ धन्यवाद।

उर्दू कुलियात बड़ी साईज़ पर अति सूक्ष्म अक्षरों में छपवाया गया था जिस में प्रमाण भाग का संशोधन न होने के कारण उन का शुद्ध लिखना अति कठिन था। प्रमाण भाग पर बहुधा प्रमाणों के पते नहीं थे। बड़े परिश्रम से उन पतों को ढूंढ़ कर लिखा गया। पुनरपि कुछ कार्य तपः साध्य अवशिष्ट है। अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु विद्वत्सु।

विनीत :
शान्ति प्रकाश (शास्त्रार्थ महारथी)
गुड़गांव (हरियाणा)

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

ओ३म्

अद्भुत वीर गाथा

शहीदे अकबर पं० लेखराम जी का अमर बलिदान आज भी आर्य समाज को अमर सन्देश दे रहा है कि उन के पश्चिम सन्देश (वसीयत) को याद रख कर आर्य समाज से तहरीर (लेखबद्ध कार्य) और तक़रीर (उपदेशकों द्वारा व्याख्यानादि से धर्म प्रचार) का कार्य बन्द न होने पाए।

पं० जी ने स्व जीवन भर इन दोनों कार्यों से आर्य समाज की सेवा की। उन के जीवन का संक्षेप यह है कि उन्होंने अपने आरम्भिक जीवन में सत्य धर्म की खोज में घोर परिश्रम किया।

वह वेदान्ती बन कर अहं ब्रह्मास्मि के जाप में अहम्मन्यता का शिकार भी बने। ग्रन्थी बनकर जप जी का पाठ करने लगे। गीता पाठ से भी उन्हें सन्तोष न हुआ और कुरान पाठ की ओर उनकी रुचि अग्रसर हुई। मुसलमान बनने की तीव्र इच्छा थी कि इसी से स्वर्ग द्वार का अनावरण होगा।

परमात्मा की कृपा हुई कि मेरे वीर ने अकस्मात् एक पुस्तक उपलब्ध की जिस का नाम कुलियात अलखधारी था। उसमें एक स्थान पर लिखा था कि :—

"जिस के मन में कोई धर्म सम्बन्धी संदेह हो और वह दूर न होता हो वह जिज्ञासु महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की सेवा में उपस्थित होकर शंका समाधान करे तो अवश्य उस की धर्म पिपासा शान्त होगी।"

पं० लेखराम जी ने तुरन्त सरकार से एक मास के अवकाश का प्रबन्ध किया और वह अजमेर में स्वामि चरणों में उपस्थित हुए। शंका समाधान हुआ, जिज्ञासा शान्त हुई। पथिक को धर्म मार्ग दीख पड़ा। वेद पथ का पथिक बन कर आर्य समाज के प्रचार कार्य में जीवन अर्पण कर दिया।

यह है वीर की संक्षिप्त अमर गाथा।

अजमेर से लौट कर पेशावर में आर्य समाज की स्थापना की। उन्हीं दिनों मुसलिम पठित वर्ग ऋषि दयानन्द के वैदिक विचारों से प्रेरित होकर आर्य समाज में सम्मिलित होने के लिए यत्नशील था। भारतीयों के विचारों में क्रान्ति का बीज वपन करने वाले इस युग के सेनानी सर्वतः प्रथम ऋषि दयानन्द सरस्वती थे। इस क्रान्ति से आंगल सरकार भयभीत हो उठी कि भारतीय विचारैक्य के पश्चात् उस का टिक सकना कदापि सम्भव न होगा। अतः विदेशी सरकार ने सर सय्यद अहमद को ऋषि भक्ति से पृथक् करने के हेतु उन के नाम पर अलीगढ़ यूनिवरसिटी खोलने का प्रलोभन प्रस्तुत कर दिया तथा मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को लाखों रुपयों की सहायता दे कर प्रोत्साहित करके आर्य समाज के साम्मुख्य के लिये खड़ा कर दिया जिस से मुसलिम समाज आर्य समाज में विलीन न होने पाए।

मिर्ज़ा गुलाम अहमद स्यालकोट कचहरी में एक साधारण लेखक थे। बहुत थोड़ी आय थी किन्तु अब मज़हबी मैदान में लाखों के वारे न्यारे हो गये। उन के कार्य का मुख्य स्थान क़ादयान बन गया जो अमृतसर के निकट गुरदासपुर का एक छोटा सा कसबा है।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

मिर्ज़ा जी ने आर्य समाज को ललकारा, ब्राहीने अहमदिया नामी पुस्तक के कई भाग प्रकाशित किये और अपने चमत्कारों की घोषणा की कि जो कोई मेरे समीप आकर रहे वह अवश्य चमत्कार देख कर मुसलमान बन जायेगा। यदि ऐसा न हो तो मैं दस सहस्र रुपये हर्जाना देने को प्रस्तुत हूं। सत्यार्थ प्रकाश का खंडन तथा वेदों और आर्य समाज के विरुद्ध बहुत बड़े २ भ्रम फैलाने की छुट्टी उन को सरकार से मिल ही गई थी। वह किसी को कुछ भी नहीं समझते थे, तब इस अवस्था में अमर सेनानी पं० लेखराम जी आर्य-पथिक सरकारी सर्विस पर लात मार कर वैदिक धर्म रक्षार्थ मिर्ज़ा के मुकाबले में कूद पड़े और डट गये।

इस का परिणाम यह हुआ कि मिर्ज़ा चमत्कार न दिखा सकने के कारण हिन्दु मुसलमानों की दृष्टि में अपमानित होकर गिर गया। ऐसी अवस्था में पं० लेखराम जी के प्राण संकट में पड़ गए। अन्ततः ६ मार्च १८९७ की सायंकाल जब वह ऋषि दयानन्द के स्वर्गमन का अन्तिम दृश्य अपनी लेखनी से खेंच रहे थे—उन के पेट में छुरा घोंप दिया गया। क़ातिल भागने में सफल हो गया और मिर्ज़ा को इसे खुदाई फैसला (ईश्वरीय निर्णय) कहने और प्रचारित करने का अवसर मिल गया।

मेरे मिर्ज़ाई मित्र प्रति वर्ष क़ादयान तथा अन्य स्थानों पर ६ मार्च को वीर लेखराम दिवस पर मिर्ज़ा को परम विजयी घोषित करते हैं और व्याख्यान देते तथा पुस्तकें बांट कर प्रसन्न होते हैं कि पं० लेखराम की मौत मिर्ज़ा जी की भविष्य वाणी के अनुसार हुई। वह मिर्ज़ा को चमत्कार पूर्ण विजेता और आर्य समाज को विजित—हारा हुआ घोषित करते हैं।

आज से बहुत पहिले मिर्ज़ाईयों ने खुदाई फैसला (ईश्वरीय निर्णय) नामी ट्रैक्ट प्रकाशित करके आर्यों को चैलंज दिया था कि जो आर्य इस ट्रैक्ट का युक्ति-युक्त उत्तर दे उसे एक सहस्र मुद्रा पारितोषिक रूपेण दिया जाएगा।

क़ादयान के मिर्ज़ागढ़ में ही मैंने इस का उत्तर अपने ६ १।२ घंटे के दो व्याख्यानों में दिया था जिस पर मिर्ज़ाईयों ने सरकार से मेरे विरुद्ध अभियोग खड़ा कराया। सरकार की ओर से एक वर्ष तक मेरा व्याख्यान देना निषिद्ध घोषित हुआ। ज़िला गुरदासपुर में मेरा प्रवेश भी एक वर्ष के लिए निषिद्ध हो गया। अभियोग में न्यायालय से मुझे छः मास की जेल मिली। सैशन की अपील भी सफल न हो सकी किन्तु :—

सच्चाई छिप नहीं सकती बनावट के असूलों से।
कि खुशबू आ नहीं सकती कभी काग़ज़ के फूलों से॥

हाई कोर्ट से मेरी विजय हुई। जहां मिर्ज़ाईयों ने मेरे पकड़े जाने पर दिए जलाए थे—वहां विजयी होने पर आर्य समाज ने स्थान २ पर दीपावली मनाई।

हाई कोर्ट का निर्णय उदाहरण बना जो कितने ही आर्यों के अभियोगों में सहायक बन कर उनके पक्ष में निर्णायक सिद्ध हुआ।

किन्तु इस प्रकाश युग में मिर्ज़ाई मित्रों का साहस है कि वह इस भविष्य वाणी के संसार पर मिथ्या सिद्ध हो जाने पर भी पुनः पुनः विजय के तराने गाते नहीं थकते।

पं० लेखराम का वध किसी बहुत बड़ी साजिस का परिणाम हो सकता है किन्तु चमत्कार और भविष्यवाणी का नाम प्रयुक्त करना जन समाज के साथ बहुत बड़ा अत्याचार है।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

यह भी निश्चित है कि आर्यसमाज के साथ चमत्कारादि सिद्धांतों पर शास्त्रार्थों का प्रारम्भ मिर्ज़ाई मित्रों की ओर से ही हुआ है तब आर्यसमाज ने पूर्ण शक्ति से इस का उत्तर दिया जिसे मिर्ज़ाई सदा स्मरण रखेंगे। मिर्ज़ाई उत्तर तो न दे सके आर्यसमाज पर झगड़ालू होने का दोषारोपण कर दिया। मिर्ज़ाईयों ने श्री पं० लेखराम जी पर भी यही दोष आरोपित किया है। अतः इस का विवेचन होना आवश्यक है।

श्री मिर्ज़ा जी ने अरबी वाक्यों में लिखा है जिस का भाव यह है कि :—

"जब मैं बीस वर्ष के लगभग पहुंचा तो इसलामिक विजय की भावना मेरे मन में डाली गई तथा वाद प्रतिवाद और लेखन कार्य का उत्साह भी ..... । सिलसिला पृष्ठ २२०१

श्री मिर्ज़ा जी ने हिन्दुओं की धार्मिक सहिष्णुता को भी स्वीकार करते हुए लिखा है कि :—

"उदाहरणार्थ हिन्दुओं की जाति एक ऐसी जाती है कि प्रायः उन में ऐसा स्वभाव रखते हैं कि यदि उनको अपनी ओर से न छेड़ा जाए तो वह चाटुकारिता के रूप में समस्त आयु मित्र बन कर मज़हबी बातों में हां में हां मिलाते रहते हैं। कभी २ तो हमारे नबी स्वलल्ला हो अलैहे वसल्लमः की प्रशंसा, गुणगान और इस धर्म के महापुरुषों की प्रशंसा और स्तुति करने लगते हैं।" सिलसिला पृष्ठ ९०५

"हिन्दू ..... हमारे शिकार हैं। वह समय आने वाला है कि तुम दृष्टि उठाकर देखोगे कि कोई हिन्दू दिखाई दे किन्तु इन पढ़े लिखे हिन्दुओं में से एक हिन्दू भी तुम्हें दिखाई नहीं देगा।" पृष्ठ ९०६

ऊपर के शब्दों तथा प्रमाणों से सिद्ध है कि धार्मिक विषयों मे हिन्दुओं की सहिष्णुता को मिर्जा जी ने स्वीकार किया है। इस से आगे मिर्जा जी ने इस बात को भी स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि हिन्दुओं (आर्यों) ने शास्त्रार्थों में पहल कभी नहीं की। क्योंकि अज़ालतुल् अवहाम में उन्होंने लिखा है कि :—

"वर्तमान में हो आर्य लोगों ने हम लोगों के आह्वान पर शास्त्रार्थों की ओर पग बढ़ाया है..... हमारे आह्वानों का वास्तव में कोई दुष्परिणाम नहीं।" सिलसिला पृ० ९०६

प्रश्न यह है कि श्री मिर्ज़ा जी यदि शास्त्रार्थों और वादविवाद को ईश्वर, प्रकृति आदि सिद्धान्तों तक सीमित रखते तो वास्तव में कोई दुष्परिणाम न होता किन्तु जब सांप्रदायिक भावनाओं को उभारने वाली बातें शास्त्रार्थों में लाई जाने लगीं तो इससे दुष्परिणाम प्रगट हुए, यहां तक कि भारत विभाजित भी हो गया।

इशतहार—"मुसलमानों की दुरवस्था और अंग्रेजी गवर्नमेंट" शीर्षक से प्रकाशित किया जो तब्लीग़े रसालत जिल्द १ पृ० ३८ तथा ब्राही ने अहमदिया जिल्द ४ के टाईटल पर लिखा है कि :—

"इनके स्कालर पंडितों को भली भान्ति ज्ञात है कि किसी वेद में गो हत्या का निसिद्ध होना नहीं पाया जाता। किन्तु ऋग्वेद के प्रथम भाग से ही सिद्ध होता है कि वैदिक काल में गो मांस साधारणतः बाज़ारों में बिकता था और आर्य लोग प्रसन्नता पूर्वक इसी को खाते थे।" पृष्ठ २३५

"और कभी आवश्यक अवसरों पर गौहत्या को उचित भी समझा जैसा कि उनके सत्यार्थप्रकाश और वेदभाष्य से प्रगट है।" पृष्ठ २३५

इशतहार के मूल प्रयोजन में गोमांस और गो हत्या का कोई विषय न था किन्तु मिर्ज़ा साहब

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

अकारण निरन्तर क्रम पूर्वक आर्यसमाज को जोश दिलाते चले गए। अन्ततः बाधित होकर पं० लेखराम जी इन भ्रमों को दूर करने के लिए मैदान में अवतीर्ण हुए।

पं० लेखराम के रक्षात्मक प्रयत्न

पं० लेखराम जी की कुलियात आर्य मुसाफिर में जितनी पुस्तकें और लेख हैं अथवा उन्होंने जो कुछ भी दूसरे मतमतान्तरों के सम्बन्ध में लिखा है—वह रक्षात्मक ही है, आक्रमणात्मक नहीं। संसार भर का नियम है कि रक्षात्मक पग उठाना कोई दोष और पाप नहीं किन्तु विधान के अनुसार श्रेष्ठ मार्ग है।

पं० जी मौलवी शैख़ अब्दुल्लाह के उत्तर में लिखते हैं कि :—

"स्व रक्षात्मक कारवाई विधान और धर्म की दृष्टि से उचित है। इसी आधार पर रक्षात्मक रूपेण हमारी ओर से भी खडनात्मक पुस्तकें लिखी गईं। अतः—

ज़रा इन्साफ़ (न्याय) तो कीजिये। निकाला किसने शर (शरारत) पहिले॥

कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ६२७

तकज़ीब जिल्द १ की रचना का प्रयोजन

शहीदे अकबर ने तकज़ीबे ब्राही ने अहमदिया जिल्द १ की रचना का प्रयोजन स्पष्टतः इस प्रकार लिखा है कि :—

"इन दिनों एक पुस्तक ब्राहीने अहमदिया (जिसके लेखक मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयान ज़िला गुरदासपुर निवासी हैं) अध्ययन में आई। अभिमान से चूर इसका लेखक दस सहस्र रुपये पारितोषिक रूपेण उत्तर दाता को देना स्वीकार करता है। .....पुस्तक में कहीं ब्राह्मों धर्म वालों से गाली गलौच हो रही है, किसी स्थान पर ईसाईयों को कोस रहे हैं, किसी स्थान पर मसीह को बिन बाप बता रहे हैं और किसी स्थान पर आर्यों को बुरा भला कह रहे हैं। मुझे इस स्थान पर किसी अन्य के लिये अभिप्राय नहीं और न मैं किसी अन्य के आधीन हूं। हां, आर्य धर्म का अनुयायी हूं और वेदोक्त सत्यता पर प्राण न्योछावर करता हूं अतः अपना कर्तव्य समझता हूं कि ब्राहीने अहमदिया को न्याय तुला पर तोलूं।"

कुलियात पृष्ठ ३२६

नुसख़ाख़ब्ते अहमदिया के आरम्भ में लिखा है कि सत्वान्वेषकों को यह तथ्य ज्ञात हो कि तकज़ीब ब्राहीने अहमदिया के प्रकाशन के अनन्तर हमारी इच्छा कदापि कोई पुस्तक मिर्ज़ा साहब अथवा इसलाम के उत्तर में खंडनात्मक लिखने का विचार न था और न नुसख़ा ख़ब्ते अहमदिया के लिखने का विचार था क्योंकि इस प्रकार युग में साधारणतः पठित लोग ऐसे चमत्कार तो किसी रूप में भी स्वीकार नहीं करते किन्तु सर्वथा व्यर्थ समझते हैं। तकज़ीब ब्राहीने अहमदिया का सम्पादन अभी हो रहा था कि मिर्ज़ा जी ने हुश्यारपुर जाकर हमारे दयालु मास्टर मुरलीधर जी आर्य समाज से शास्त्रार्थ छेड़ा और 'सुरमा चशमे आर्य' नामी एक २६० पृष्ठ की पुस्तक लिख कर छपवा दी।

कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ५०२

तकज़ीब जिल्द २ का प्रयोजन

Indian Islamic Research Institute

"तकज़ीबे बराहीने अहमदिया (अहमदी=मिर्ज़ाईयों की युक्तियों का मिथ्यापन) और नुसख़ा

www.aryamantavya.in

खब्ते अहमदिया (अहमदी=मिर्जाईयों के रोग का निदान) इन दो पुस्तकों की रचना के पश्चात् हमारा विचार मुहम्मदीमत के विरुद्ध अन्य कोई पुस्तक लिखने का नहीं था, किन्तु क्या करे—हमारे विरोधी आराम से नहीं बैठने देते हैं। बार बार उकसाते हैं कि हम अपने समस्त सिद्धान्तों से संसार को अवगत करायें और उन्हें वैदिक मार्ग का सीधा पथ बता कर अपने कर्तव्यों से उऋण हों। मिर्जा जी आईनाए कमालाते इसलाम (इसलामी पूर्णताओं का दर्पण) नामी पुस्तक में तर्क संगत उत्तर से शून्य हो कर ···· आक्रमणों पर उतर आये·····मिर्जा जी के सबसे बड़े भक्त मौलवी नूरुद्दीन शाही हकीम ने बराहीने अहमदिया के अनुमोदन में "तसदीक बराहीने अहमदिया" नामी पुस्तक लिखी और अपनी मिथ्या कल्पना में बराहीन की न्यूनता पूरी की।

अतः आज दश वर्षों के पश्चात् परमात्मा के अनुग्रह और ईश्वर की कृपा से हम तकज़ीबे बराहीने अहमदिया जिल्द २ का प्रकाशन करते ····· हैं।" कुलियात आर्य मुसाफिर पृ० ४३२

मौलवी इनायतुल्लाह साहब ने पं० लेखराम जी के पक्ष में गवाही दी है। अपनी "किताबे हक्को बातिल" (सत्यासत्य मीमांसा नामी) पुस्तक में लिखा है कि :—

"एक बात विशेष रूप से स्मरण रखने के योग्य है कि पं० लेखराम जी ने इसलाम के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उसका कारण भी अधिकतर मिर्जा जी का आर्यों को सम्बोधन करने का ढंग और कठोर वचन है जैसा कि पं० ने अपनी पुस्तकों में इस बात की व्याख्या कर दी है।"

शहीदे अकबर में पं० लेखराम जी इसलाम अथवा मिर्जा जी के सम्बन्ध में कोई भी पुस्तक लिखना न चाहते थे यदि वह बाधित न कर दिये जाते। जैसा कि स्वयं पं० जी ने लिखा है कि :—

"मेरा विचार इसलाम के सम्बन्ध में कोई पुस्तक लिखने का न था किन्तु मिर्जा जी की पुस्तकों ने मुझे इसके लिए बाधित किया।" कुलियात पृ० ६०२

पं० जी ने रक्षात्मक उत्तर प्रकाशित किये। गौ के सम्बन्ध में आक्रमण किया गया था। वेद के सैंकड़ों मंत्रों में उसकी प्रतिष्ठा स्थिर है। ऋग्वेद में उसे माता कहा गया है और उसके मारने का कठोरतम विरोध है। देखिये :—

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्रनुवोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ठ ॥

ऋ० ८।१०१।१५

गौ प्राणधारी, वास योग्य, अखंड जीवन यज्ञ गामी जीव धारी प्राणियों की माता, दुहिता=कन्या और भगिनी है। क्योंकि यह सबके लिये अमृत का स्रोत है। अतः मैं परमेश्वर सभी विचारशील बुद्धिमानों और चिकित्सा शास्त्रियों से कहता हूं कि निष्पाप, अखंडनीया गौ माता को मत मारो।

यदि नो गांहंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथानोऽसोऽवीरहा ॥ अथर्व १।१६।४

यदि तू हमारी गौ, अश्व, पुरुषादि को मारेगा तो हम तुझको गोली से उड़ा देंगे जिससे हमारे राष्ट्र में वीरता का नाश न हो।

यह संसार के चक्रवर्ति राष्ट्रपति की घोषणा है। गौमाता का अपमान भी वेद में असह्य है, लिखा है कि :—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

यश्च गांपदा स्फुरति .....वृश्चामि तस्य मूलम् । अथ० १३।१।५६

जो कोई गौमाता को पाद की ठोकर से भी अपमानित करता है अर्थात् जिस राष्ट्र में गौमाता का अपमान होता है। परमात्मा की आज्ञा है कि मैं उस राष्ट्र का मूल नाश कर देता हूं। गो नाश के साथ ही राष्ट्र की जड़ कट जाती है।

सामवेद में गौ के प्रति राष्ट्र को पवित्र होने का आदेश है। यजुर्वेद के पहिले ही मंत्र में गौ को अघ्न्या लिखा है। अर्थात् गौ सदैव अहन्तव्या है।

चारों वेदों में गौ की प्रतिष्ठा और महिमा अपार है। आर्य जाति सदैव गोभक्त रही है। वेदों में उसे माता कहकर उसके मारने और कष्ट देने का कठोर निषेध है। पुनः वैदिक युग में गो मांस को बाजारों में कैसे बेचा जा सकता था? ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य और सत्यार्थप्रकाश में कहीं और किसी अवस्था में भी गौ के मारने की गन्ध भी नहीं किन्तु स्थान २ पर गौमाता की रक्षा सम्बन्धी आज्ञा विद्यमान है।

महर्षि दयानन्द गोभक्त थे, गौपाल थे। गोरक्षा आन्दोलन का उन्होंने सूत्रपात किया था। रिवाड़ी की प्रथम गौशाला का शिलान्यास उन्होंने रखा था। गोकरुणानिधि को लिखकर गोरक्षा में उन्होंने कमाल कर दिया। गौ को प्रधान मान कर पशु रक्षा ही उनका ध्येय था। अतः मिर्जा जी ने इस गो सम्बन्धी प्रश्न को छेड़कर आर्यों की भावनाओं को उभारा और ठेस पहुंचाई। भारत में हिन्दु मुसलिम सम्बन्ध दृढ़ बनाने के स्थान पर बिगाड़ने का प्रयत्न किया।

इसी प्रकार शेष बातों के सम्बन्ध में भी समझा जा सकता है। मिर्जाई महानुभावों की पुस्तकें और लेख स्वयं आक्षेप योग्य और लड़ाई झगड़ों के प्रेरक हैं।

देखिये! एक अहमदी मित्र की शरारत। पं० लेखराम जी के सम्बन्ध में लिखता है कि :--

"किन्तु इनके सम्मुख जब हम पं० लेखराम के वंश पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें शोक मग्न हो कहना पड़ता है कि इनका नाममात्र भी कोई नाम लेवा नहीं रहा। चाहे किसी ढंग से ही होता। हां, इतना ज्ञात हुआ है कि पं० जी के हां एक लड़का उत्पन्न हुआ था किन्तु शोक कि वह भी इनके जीवन काल में ही वियोग का धब्बा लगाकर नाशगृह को चल बसा।"

(शहादते लेखराम पृ० ११ लेखक फ़खरुद्दीन मुलतानी)

बड़े भारी शोक के साथ लिखना पड़ता है कि शहादते लेखराम के लेखक फ़खरुद्दीन मुलतानी की दृष्टि में पं० जी सुपुत्र का इनके धर्म प्रचार यात्रा में संलग्न होने के कारण सन्तोषप्रद औषधोपचार न हो सकने से ईश्वर को प्यारा हो जाना इनके निकट आक्षेप योग्य और उपहासनीय है। जबकि दूसरे महापुरुषों के साथ भी ऐसा हुआ है। स्वयं आं हज़रत स्वलल्ला हो अलैहि वसल्लमा मुसतफ़ा मुहम्मद साहब की जीवनी में भी ऐसी घटना विद्यमान है।

संभव है कि अहमदी मित्र इस आक्षेप से आर्यों को चिड़ाकर उनसे आं हज़रत के सम्बन्ध में भी ऐसे शब्द दोहराने की अवस्था में हिन्दु मुसलिम चपलकश से स्वयं साम्प्रदायिक लाभ अर्जित करना चाहता हो किन्तु हम आर्य लोग किसी भी महापुरुष के सम्बन्ध में इस प्रकार के अनुचित शब्दों को बहुत बड़ा पाप समझते हैं। अतः इस प्रकार की निन्दनीय प्रवंचना के दोषी नहीं हो सकते।

मिर्जा जी की पुस्तकों का उत्तर पं० जी ने दिया। उत्तर का उत्तर मिर्जा जी को देना चाहिये था, किन्तु नहीं दे सके। यह पं० जी की शानदार विजय थी।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

पं० लेखराम की अपूर्व विजय

मिर्ज़ा जी पं० जी के उत्तर का उत्तर नहीं दे सके और घबरा कर मिर्ज़ा जी ने अपने विशेष मुरीद (भक्त) हकीम नूरुद्दीन जी को एक पत्र में लिखा है कि :—

"सेवा और प्रतिष्ठा के योग्य मौलवी नूरुद्दीन साहिब ! खुदा तआला आपको सलामत रखे ! ... .कि अभी वर्तमान में लेखराम नामी एक व्यक्ति ने मेरी पुस्तक बराहीने अहमदिया के खंडन में बहुत कुछ बकवास की है और अपनी पुस्तक का नाम तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया (अहमदी युक्तियों का मिथ्यापन) रखा है ..... इस पुस्तक के प्रकाशन से हिन्दुओं में बहुत जोश हो रहा है ..... इसलिए मैं आपको यह कष्ट देता हूं कि आप आरम्भ से अन्त तक इस पुस्तक को देखें और इस व्यक्ति ने इसलाम पर जितने आक्षेप किये हैं, इन सब को एक स्मृति पत्र पर पुस्तक के पृष्ठ के साथ स्मरणार्थ नकल करें। पुनः इनके सम्बन्ध में उपयुक्त उत्तर सोचें और अल्लाह तआला आपको जितने तर्क संगत उत्तर दिल में डाले, वह सब पृथक् २ लिख कर मेरी ओर भेजते रहें। जो कुछ विशेष मेरे ज़िम्मा होगा मैं समय पाकर इसका उत्तर लिखूंगा। कुछ हो यह कार्य अत्यावश्यक है और मैं बहुत बल पूर्वक आप की सेवा में निवेदन करता हूं कि आप सम्पूर्ण यत्न के साथ तप और कुर्बानी से इस ओर ध्यान देने की कृपा करें।" मकतूबाते अहमदिया जिल्द ५ पृ० ३७,३८

"लेखराम पेशावरी की पुस्तक सेवा में प्रेषित कर दी गई है। आशा है कि उच्चावस्था के ध्यान से इसका पूर्णतः खंडन फरमायेंगे, जिससे कुस्वभाव विधर्मी का शीघ्रतर अपमान हो। आशा है कि पूजनीय आप लेखराम की ओर बहुत शीघ्र ध्यान फरमायेंगे।

प्रथम इसके सम्पूर्ण आक्षेप पृथक् पत्रों पर चुन लिए जाएं, पुनः संक्षिप्त और उपयुक्त दांत तोड़ने वाला उत्तर दिया जाए। प्रकाश स्वरूप परमात्मा आप पर सदैव आनन्द, दया और विजय की छाया रखे।" मकतूबात, जिल्द ५ पृष्ठ ३९,४०

इन दो पत्रों से स्पष्ट है कि मिर्ज़ा जी पं० जी को अकाट्य युक्तियों और तर्क समन्वित उत्तर से बहुत परेशान थे। उनसे स्वयं उत्तर नहीं बन पड़ा। उन्होंने अपने मुरीद जी को जिन शब्दों में इसका उत्तर सोचने की प्रेरणा दी। इस पर कुछ विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं। हमारी घोषणा है कि मिर्ज़ा जी पं० जी का उत्तर अन्तिम समय तक भी नहीं दे सके।

पं० जी ने बुराहीन का उत्तर तकज़ीब से दिया। सुरमा चशमे आर्य का उत्तर नुसखा खबते अहमदिया से दिया। जब देखा कि पलड़ा आर्यों के वकील का भारी है तो झट उनके सम्बन्ध में निरंतर कुछ इस प्रकार का लिख जाता रहा, जिसका परिणाम पं० जी के बलिदान के अतिरिक्त और कुछ न हो सकता था।

अतः इस प्रकार विचार करने से सूर्य प्रकाशवत् प्रगट है कि पं० लेखराम विजेता हैं।

युक्ति प्रयुक्ति का उत्तर युक्ति से न दे सकने के कारण ही प्रथम गाली गलौच और पुनः छुरी की धमकी का नम्बर आ सकता था। ऐसा ही हुआ। इसमें भविष्य वाणी और चमत्कार की कोई बात नहीं और नहीं इसकी कोई महत्ता है।

शहनहे हक्क में गाली गलौच

मिर्ज़ा जी अपनी पुस्तक शहनहे हक्क में पं० जी के सम्बन्ध में लिखते हैं कि :—

"यदि इसके सम्बन्ध में निश्चित समय तक कोई ऐसी इलहामी भविष्य वाणी प्रगट हो गई,

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

जिसके मुकाबला से वह अशक्त हो जाए। या तो इस स्थान पर अपनी लम्बी चोटी कटा कर और व्यर्थ पहने हुए यज्ञोपवीत को तोड़ कर इस पवित्र संस्था (मिर्ज़ाई संस्था) में प्रविष्ट हो जाए। ..... (इसने) हमारा नाम छली कपटी रखकर ईश्वरीय इलहामों को सर्वथा छल कपट घोषित किया। पुराने जंगली उजड अर्यों की भान्ति हमने गन्दी गालियां दीं। ..... ऐसे ..... और युद्ध प्रेमी को निम्नलिखित पारितोषिक जो वास्तव में बिच्छू की भान्ति डंक मारने और मार्ग वंचक ..... की अवस्था में इसके योग्य देता हूं ..... । सिलसिला जिल्द २ पृ० ७६६–७६७

इसके आगे वह पारितोषिक लिखा है, जिसके लिखने से हमारी लेखनी भी अशक्त है–इसलिये कि हम हिन्दू मुसलिम एकता को मानते हैं। हमें आर्यों को जोश दिलाकर अहमदियों के विरुद्ध घृणा दिलाना अभीष्ट नहीं। हमारे इस लेख लिखने का प्रयोजन तो केवल इतना है कि अहमदी मित्र अब संसार का परीक्षण करके वायु मण्डल को न बिगाड़ें। आंगल राज्य चले जाने के पश्चात् अब इस सैकुलर सरकार में हिन्दु मुसलिम एकता में रुकावट डालना शोभनीय कदापि नहीं कहा जा सकता।

सिद्धान्तों पर शास्त्रार्थ श्रेष्ठ, शुभ, मधुर, सत्यवाणी द्वारा किसी से भी किये जा सकते हैं। उसे कोई भी सामयिक सरकार नहीं रोक सकती, किन्तु पुराने गढ़ों को उखाड़ कर और विजय दुन्दुभि बजा बजा कर दूसरों की भावनाओं के साथ खेलना मिर्जाई मित्रों के लिये कदापि कभी भी प्रशंसनीय और शोभनीय नहीं। अतः हम अहमदी मित्रों की बातों का केवल इतना ही उत्तर दे रहे हैं जिनका सिद्धान्तों के साथ सम्बन्ध है। गाली गलौच के उत्तर से हमें दूर रहना ही आवश्यक है :—

ददतु ददतु गालीं, गालीमन्तो भवन्तः।
वयमपि तदभावाद् गालीदानेऽसमर्थाः॥

जगति विदितमेतत् यद् दीयते विद्यमानम्।
नहि शशकविषाणं कोऽपिकस्मै ददाति॥

दीजिये, दीजिये गाली, आप गालीमान् हैं। हम गाली रहित होने से गाली का उत्तर गाली से देने में सर्वथा असमर्थ हैं। संसार में यह विदित ही है कि विद्यमान वस्तु दी जा सकती है। खरगोश के सींग का अत्यन्ताभाव होने से कोई किसी को नहीं देता।

मिर्ज़ा जी गाली देने में सिद्धहस्त थे। हानि और हत्या सम्बन्धी भविष्यवाणी करना उनका सहज स्वभाव था। पुनः अत्याचार यह कि उसे बार २ ईश्वरीय निर्णय कहते चले जाते थे। यहाँ तक कि भविष्यवाणी की भाषा और शब्द भी ईश्वरीय बताते थे। अरबी में ही उनका एक इलहाम है जिस में पं० लेखराम जी को पिशावरी लिखा है। क्या ईश्वर को यह ज्ञात नहीं था कि पं० जी सैदपुर ज़िला जेहलम के निवासी होने से सैदपुरी लिखे जाने के योग्य हैं। पुनः यह खुदाई फैसला कैसे ? मनुष्य की यह निर्बलता है कि वह स्वार्थसिद्धि में तत्पर होकर अपने दोष ईश्वर पर अर्पित करके उसे अपना साझीदार बताता है। इसीलिए वेद में कहा ही तो है कि :—

पदा पणीरराधसो नि बाधस्व महानसि।
नहि त्वा कश्चन प्रति॥ ऋ० ८।६४।२

अपरिपक्व छली कपटी पणी लोगों को ईश्वर अपनी अनन्त ज्ञान महिमा के सामर्थ्य से बाधित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

www.aryamantavya.in

और पीड़ित करते हैं क्योंकि ईश्वर का कोई प्रतिनिधि नहीं जो उसकी ओर से ठेकेदार बन कर लोगों को मृत्यु आदि की भविष्य वाणियां सुनाता और डराता, धमकाता फिरे।

पं० लेखराम की विजय

श्री मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादयानी ने अप्रैल १८८५ ईस्वी में एक विज्ञापन के द्वारा भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के विशिष्ट व्यक्तियों को सूचित किया कि दीने इसलाम की सच्चाई परखने के लिए यदि कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति एक वर्ष के काल तक मेरे पास क़ादयान में आ कर निवास करे तो मैं उसे आसमानी चमत्कारों का उसकी आँखों से साक्षात् करा सकता हूं। अन्यथा दो सौ रुपए मासिक को गणना से हर-जाना या जुर्माना दूंगा।

इस पर पं० लेखराम जी ने चौबीस सौ रुपए सरकार में जमा करा देने की शर्त के साथ स्वीकृति दी। उस समय वह आर्यसमाज पेशावर के प्रधान थे।

मिर्ज़ा जी ने इस पर टालमटोल से कार्य करते हुए क़ादयान, लाहौर, लुध्याना, अमृतसर और पेशावर के समस्त आर्य सदस्यों की अनुमति की शर्त लगा दी कि वह पं० लेखराम जी को अपना नेता मानकर उनके आसमानी चमत्कार देख लेने के साथ ही उनके सहित ननुनच के विना दीने इसलाम को स्वीकार करने की घोषणा करें। जब कि स्वयं मिर्ज़ा जी ने स्वीकार किया है कि "वह आर्यों का एक बड़ा एडवोकेट और व्याख्यान दाता था।" नजूलुल्मसीह पृ० १७०

"वह अपने को आर्य जाति का सितारा समझता था और आर्य जाति भी उसको सितारा बताती थी।" हक़ीकतुल्वही का हाशिया पृ० २९३

अन्ततः मिर्ज़ा जी ने चौबीस सौ रुपये सरकार में सुरक्षित न करा कर केवल पं० जी को दो तीन दिन के लिए कादयान आने का निमन्त्रण दिया और साथ ही चौबीस सौ रुपये सरकार में सुरक्षित कराने की शर्त पं० जी के लिए बढ़ा दी जिससे चमत्कार स्वीकृति से इन्कार की अवस्था में वह रुपए मिर्ज़ा जी प्राप्त कर सकें। पं० जी ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया और लिखा कि जो आसमानी चमत्कार आप दिखायेंगे, वह कैसा होगा ? उसका निश्चय पूर्व हो जाए। क्या कोई दूसरा सूर्य दिखा-ओगे कि जिस का उदय पश्चिम और अस्त पूर्व में होगा ? अथवा चांद के दो टुकड़े करने के चमत्कार को दोहराएंगे ? अर्थात् पूर्णिमा की रात्रि को चन्द्रमा के दो खण्ड हो जावें और अमावस्या की रात्रि को पूर्णिमा की भान्ति पूर्ण चन्द्र का उदय हो जावे। इसमें जो चमत्कार दिखाना सम्भव हो, इसकी तिथि और चमत्कार दिखाने का समय निश्चित किया जाए जिसे जनता में प्रसिद्ध कर दिया जाए।

किन्तु मिर्ज़ा जी इस स्पष्ट और भ्रमरहित नियम को स्वीकार न कर सके। इसका उत्तर देना और स्वीकार करना इनके लिए असम्भव हो गया। स्वीकार किया कि हम यह शर्त पूरी नहीं कर सकते और न ऊपर लिखे चमत्कार दिखा सकते हैं। किन्तु हमें ज्ञात नहीं कि क्या कुछ प्रगट होगा या न होगा? और इस आकस्मिक आपत्ति से पीछा छुड़ाना चाहा।" कुलियात पृ० ४१२

अन्ततः पं० जी ने मिर्ज़ा जी को लिखा कि :—

"बस शुभ प्रेरणा के विचार से निमन्त्रण दिया जाता है ..... वेद मुकद्दस पर ईमान लाईये। आप को भी यदि दृढ़ सत्यमार्ग पर चलने की सदिच्छा है तो सच्चे हृदय से आर्य धर्म को स्वीकार करो। मनरूपी दर्पण को स्वार्थमय पक्षपात से पवित्र करो। यदि शुभ सन्देश के पहुंचने पर भी सत्य की ओर

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

ध्यान न दोगे तो ईश्वर का न्याय नियम आपको क्षमा न करेगा.....और जिस प्रकार का आत्मिक, धार्मिक अथवा सांसारिक सन्तोष आप करना चाहें—सेवक उपस्थित और समुद्यत है।

पत्र पेषक :—

लेखराम अमृतसर ५ अगस्त १८८५ ईस्वी

इस अन्तिम पत्र का उत्तर मिर्ज़ा जी की ओर से तीन मास तक न आया। तब पं० जी ने एक पोस्ट कार्ड स्मरणार्थ प्रेषित किया। उसके उत्तर में मिर्ज़ा जी का कार्ड आया कि क़ादयान कोई दूर तो नहीं है। आकर मिल जाएं। आशा है कि यहां पर परस्पर मिलने से शर्तें निश्चित हो जाएंगी।

इस प्रकार से पं० जी की विजय स्पष्ट है जिसे कोई भी नहीं छिपा सकता। मिर्ज़ा जी के पत्रानुसार अन्ततः पं० जी क़ादयान पहुंचे। वहां दो मास तक रहने पर भी मिर्ज़ा जी किसी एक बात पर टिक नहीं सके। क़ादयान में दो मास ठहर कर वहां आर्यसमाज स्थापित करके चले आए। आर्य-समाज कादयान की स्थापना हुई तो मिर्ज़ा जी के चचेरे भाई मिर्ज़ा इमाम दीन और मुल्लां हुसैनाँ भी आर्यसमाज के नियम पूर्वक सदस्य बने। मिर्ज़ा जी ने भी पं० जी के दो मास तक कादयान निवास को स्वीकार किया है। देखो हक़ीकतुल्वही पृ० २८८

पं० जी ने कादयान में रह कर मिर्ज़ा जी को उनके वचनानुसार आसमानी चमत्कार दिखाने के लिए ललकारा और लिखा कि आप अच्छी प्रकार स्मरण रखें कि अब मेरी ओर से शर्त पूरी हो गई। सत्य की ओर से मुख फेर लेना बुद्धिमानों से दूर है। ५ दिसम्बर १८८५ ईस्वी

मिर्ज़ा जी ने आसमानी चमत्कार दिखाने के स्थान पर आर्य धर्म और इसलाम के दो तीन सिद्धान्तों पर शास्त्रार्थ करने का बहाना किया। अन्य शर्तें निश्चित करने का भी लिखा। जिस पर पं० ने लिखा कि मेरा पेशावर से चलकर कादयान आने का प्रयोजन केवल यही था और अब तक भी इस आशा पर यहां रह रहा हूं कि आपके चमत्कार=प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध कार्य, करामात व इलहामात और आसमानी चिह्नों का विवेचन करके साक्षात् करूं। और इससे पूर्व कि किसी अन्य सिद्धान्त पर शास्त्रार्थ किया जाए यह चमत्कार दर्शन की बात एक प्रतिष्ठित लोगों की सभा में अच्छी प्रकार निर्णीत हो जानी चाहिए। और इसके सिद्ध कर सकने में यदि आप अपनी असमर्थता बतावें तो शास्त्रार्थ करने से भी मुझे किसी प्रकार का इन्कार नहीं।

तीसरा और चौथा पत्र

पुनः पं० जी ने तीसरे पत्र में लिखा कि ..... मुझे आज यहां पच्चीस दिन आए हुए हो गए हैं। मैं कल परसों तक जाने वाला हूं। यदि शास्त्रार्थ करना है तो भी, यदि चमत्कार दिखाने के सम्बन्ध में नियम निश्चित करने हैं तो भी शीघ्रता कीजिए। अन्यथा पश्चात् मित्रों में फर्रे मारने का कुछ लाभ न होगा। किन्तु बहुत ही अच्छा होगा कि आज ही स्कूल के मैदान में पधारें। शैतान, सिफारिश, चांद के टुकड़े होने के चमत्कार का प्रमाण दें। निर्णायक भी नियत कर लीजिए। मेरी ओर से मिर्ज़ा इमामदीन जी (मिर्ज़ा जी के चचेरे भाई) निर्णायक समझें। यदि इस पर भी आपको सन्तोष नहीं है तो ईश्वर के लिए चमत्कारों के भ्रमजाल से हट जाइए। १३ दिसम्बर १८८५ ईस्वी

पं० जी ने चतुर्थ पत्र में मिर्ज़ा जी को पूर्ण बल के साथ ललकारा और लिखा कि ..... आप सर्वथा स्पष्ट बहाना, टालमटोल और कुतर्क कर रहे हैं। मिर्ज़ा साहब ! शोक !! महाशोक !!! आप को निर्णय स्वीकार नहीं है। किसी ने सत्य कहा है कि :—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

उज़ुरे नामआक़ूल साबितमेकुनद तक़सीर रा ।

बुद्धिशून्य टालमटोल तो जुर्म को ही सिद्ध करता है ।

इसके अतिरिक्त आप द्वितीय मसीह होने का दावा करते हैं । इस अपने दावा को सिद्ध कर दिखाइए । (लेखराम कादयान ९ बजे दिन के)

अन्ततोगत्वा मिर्ज़ा जी ने समयाभाव और फ़ारिग न होने का बहाना किया । जिससे पं० जी को दो मास कादयान रहकर लौट आना पड़ा ।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि मिर्ज़ा जी ने पं० लेखराम जी की भावना शुद्ध न होने का भी बहाना किया है । यह दोषारोपण हक़ीकतुल्वही पृष्ठ २८८ से खंडित हो जाता है । क्योंकि वहां उनके स्वभाव में सरलता का स्वीकरण स्पष्ट विद्यमान है । इस पर भी अहमदी मित्र यदि पं० लेखराम जी की पराजय और श्री मिर्ज़ा जी की विजय का प्रचार करते और ढोल बजाकर अपने उत्सवों में घोषणा करते हैं तो यह उनका साहस उनकी अपनी पुस्तकों और मिर्ज़ा जी के लेखों के ही विरुद्ध है । यदि पं० का वध किया जाना आसमानी चमत्कार समझा जाए तो भी ठीक नहीं । क्योंकि आसमानी चमत्कार दिखाने का समय एक वर्ष के अन्दर सीमित था । और उसके साथ पं० लेखराम जी के इसलाम को स्वीकार करने की शर्त बन्धी हुई थी जैसा कि मिर्ज़ा जी के विज्ञापन में लिखा गया था । इन दोनों बातों के पूरा न होने के कारण पं० जी की विजय सूर्य प्रकाशवत् प्रगट है क्योंकि मिर्ज़ा जी ने स्वयं लिखा है कि :—

"यह प्रस्ताव न अपने सोच विचार का परिणाम है किन्तु हज़रत मौला करीम (दयालु भगवान्) की ओर से उसकी आज्ञा से है । ..... इस भावना से आप आवेंगे तो अवश्य इन्शाअल्लाह (यदि भगवान् चाहे) आसमानी चमत्कार का साक्षात् करेंगे । इसी विषय का ईश्वर की ओर से वचन हो चुका है जिसके विरुद्ध भाव की सम्भावना कदापि नहीं ।" तब्लीगे रसालत जिल्द १ पृ० ११-१२

शर्त निश्चित न हो सकने के कारण पं० जी को कादयान से वापिस लौटना पड़ा । इसका प्रमाण पं० जी और मिर्ज़ा जी की पुस्तकों से प्रगट है ।

पं० जी ने लिखा ही तो है कि :—

"..... अन्ततोगत्वा मिर्ज़ा साहब ने एक वर्ष रहने की शर्त को भी धनाभाव के कारण बहाना साज़ी, क्रोध और छल कपट से टाल दिया । बाधित होकर मैं दो मास कादयान रहकर और वहां आर्य-समाज स्थापित करके चला आया ।" कुलियात पृ० ४१५

इशतहार सदाक़त अनवार में श्री मिर्ज़ा जी ने पं० लेखराम जी के कादयान में आकर दो मास ठहरने और शर्तें निश्चित न हो सकने का उल्लेख किया है । अतः अहमदी मित्रों को ननुनच के बिना स्वीकार कर लेने में संकोच न करना चाहिए कि आगे के घटना चक्र में हत्या का विषय चमत्कार का परिणाम नहीं किन्तु इस पराजय का परिणाम ही है जिसे भविष्यवाणी का नाम दे दिया गया है । किन्तु सत्य तो अन्ततोगत्वा सत्य ही है कि श्री मिर्ज़ा साहब सुलतानुल्क़लम (मिर्ज़ा जी का एक इलहाम सुलतानुल्क़लम का है । अतः वह अपने को क़लम का बादशाह मानते थे) की लेखनी से सत्य का प्रकाश हुए बिना न रह सका । और पं० लेखराम जी के वध को केवल हत्या नहीं प्रत्युत बलिदान अर्थात् शहीद मान लिया । देखिये स्पष्ट लिखा है कि :—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

"सो आसमानों और जमीन के मालिक ने चाहा कि लेखराम सत्य के प्रकाश के लिए बलि हो और सत्य धर्म की सत्यता प्रगट करने के लिए बतौर बलिदान के हो जाए। सो वही हुआ, जो खुदा ने चाहा ॥"

वास्तव में पं० लेखराम सत्य सनातन वैदिक धर्म को सत्यता के प्रकाश के लिए शहीद हुए हैं। शहीद शब्द अरबी भाषा का है। अतः मिर्ज़ा जी ने इसका पर्यायवाची शब्द बलिदान रखा है। वेद में अंग २ कटा कर धर्म प्रचार की सच्चाई का प्रमाण देने वाले मनुष्य को अमर पदवी की प्राप्ति होती है। इसकी मुक्ति में कोई सन्देह नहीं रहता। क़ुरान शरीफ़ में भी शहीदों, सत्य पर मिटने वालों को जीवित कहा है। जिनके लिए न कोई भय और न कोई शोक है। खुदा के समीप इनका पद उच्च से उच्च है।

पं० लेखराम की शहादत पर संसार ने साक्षी दी कि उनका धर्म सत्य और वह सत्य के प्रचारक थे। स्वयं श्री मिर्ज़ा जी ने पं० जी के बलिदान से पूर्व वेदों को नास्तिक मत का प्रतिपादक घोषित किया था।

नास्तिक मत के वेद हैं हामी।
बस यही मुद्आ (प्रयोजन) है वेदों का ॥

सिलसिला जिल्द २ पृ० ६५९

किन्तु पं० लेखराम आर्य पथिक के महा बलिदान के पश्चात् स्पष्ट रूप से घोषणा की जब कि मिर्ज़ा जी के दिवंगत होने में चार दिन शेष थे। अतः यह उनका अन्तिम लेख और अहमदी मित्रों के लिए यह उनकी अन्तिम वसीयत है कि वह भी श्री मिर्ज़ा की भान्ति पं० जी को सच्चा शहीद और वेद मुकद्दस को पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार करें।

मिर्ज़ा जी ने अपनी अन्तिम पुस्तक में घोषणा की है —यह पूज्य पं० जी की ईश्वर से सच्चे मन से की गई प्रार्थना का परिणाम है जो इस प्रकार है कि :—

..... हे परमेश्वर ! हम दोनों में सच्चा निर्णय कर और जो तेरा सत्य धर्म है उस को न तलवार से किन्तु प्यार से तर्क संगत प्रकाश से जारी कर और विधर्मी के मन को अपने सत्य ज्ञान से प्रकाशित कर जिस से अविद्या, पक्षपात, अत्याचार और अन्याय का नाश हो। क्योंकि झूठा सच्चे की भान्ति तेरे सम्मुख प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं कर सकता।" नुसख़ा (निदान) १८८८ ईस्वी

मिर्ज़ाजी की प्रार्थना असफल

पं० जी की प्रार्थना से पूर्व मिर्ज़ा जी ने भी अपने विचार तथा मन्तव्य के अनुसार ईश्वर से प्रार्थना की थी। जो निम्न प्रकार है :—

" ..... ऐ मेरे जब्बारो कहार खुदा ! यदि मेरा विरोधी पं० लेखराम कुरआन को तेरा कलाम (वाणी) नहीं मानता। यदि वह असत्य पर है तो उसे एक वर्ष के अन्दर अज़ाब (दुःख) की मृत्यु दे।"

सुरमा सन् १८८६ ईस्वी

मिर्ज़ा जी ने १८८६ ईस्वी में पं० जी के विरुद्ध ईश्वर से उन के लिये दुःखपूर्ण मौत मारने की प्रार्थना की। किन्तु यह प्रार्थना वर्ष भर बीत जाने पर भी स्वीकार नहीं हुई। अतः मिर्ज़ा जी के प्रार्थना के शब्दों में कुरान् शरीफ़ ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध न हो सका। किन्तु पं० लेखराम जी ने मिर्ज़ा जी की प्रार्थना का एक वर्ष बीत जाने और उस प्रार्थना के विफल सिद्ध होने पर १८८८ ईस्वी में अपनी आर्यों

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

की गौरव पूर्ण प्रार्थना परमात्मा के समक्ष सच्चे एकाग्र मन से लिखी। जिस में एक वर्ष की अवधि की शर्त नहीं थी। जीवन भर में किसी समय भी इस प्रार्थना की आपूर्ति सम्भव थी जो परमात्मा की कृपा से पूर्ण सफल हुई। अतः वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने तथा पं० जी के सत्य सिद्ध होने में कोई सन्देह न रहा।

इसलाम की परिभाषा में इसी का नाम "मुबाहला" है। जो दो भिन्न विचारवान् व्यक्ति भीड़ के सम्मुख शपथ पूर्वक परमात्मा से प्रार्थना करते हैं। मिर्ज़ा जी ने अन्तिम निर्णय के लिए मुबाहला की प्रस्तावना रखी थी और उस की विस्तृत प्रार्थना लिख कर छाप दी थी। चाहे नियम पूर्वक मुबाहला नहीं हुआ। किन्तु उस की रसम पूरी मान ली जाए। तो मिर्ज़ा जी की पराजय और आर्य गौरव पं० जी की विजय स्पष्ट सिद्ध है।

पं० जी की प्रार्थना यह है कि "विधर्मी" (मिर्ज़ा जी) के मन में सत्य ज्ञान का प्रकाश कर।"

परमात्मा ने इसे स्वीकार किया और मिर्ज़ा जी धीरे २ वैदिक धर्म के सिद्धांतों के निकट आते चले गये। प्रथम मिर्ज़ा जी ने जीव तथा प्रकृति को नित्य स्वीकार किया। पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर ईमान लाए। स्वर्ग, नरक के इसलामिक सिद्धांत को परिवर्तित किया। जिहाद की समाप्ति की घोषणा की। अन्त में अपनी मृत्यु से चार दिन पूर्व "पैग़ामे सुलह" (शान्ति का सन्देश) नामी पुस्तक लिखी जिस में अपने वैदिक धर्मी होने की घोषणा इन शब्दों में की :—

(१) "हम अहमदी सिलसिला के लोग सदैव वेद को सत्य मानेंगे। वेद और उस के ऋषियों की प्रतिष्ठा करेंगे तथा उन का नाम मान से लेंगे।" पृ० ३०

(२) "इस आधार पर हम वेद को ईश्वर की ओर से मानते हैं और उस के ऋषियों को महान् और पवित्र समझते हैं। पृ० २७

(३) "तो भी ईश्वर की आज्ञानुसार हमारा दृढ़ विश्वास है कि वेद मनुष्य की रचना नहीं है। मानव रचना में यह शक्ति नहीं होती कि कोटि मनुष्यों को अपनी ओर खेंच ले और पुनः नित्य का क्रम स्थिर कर दें।" पृ० २७

(४) "हम इन कठिनाईयों के रहते भी ईश्वर के भय से वेद को ईश्वरीय वाणी जानते हैं और जो कुछ उस की शिक्षा में भूलें हैं वह वेद के भाष्यकारों की भूलें समझते हैं।" पृ० २९

इस से सिद्ध हुआ कि वेद की कोई भूल नहीं। वेद के वाम मार्गी भाष्यकारों की भूल है।

(५) मैं वेद को इस बात से रहित समझता हूं कि उस ने कभी अपने किसी पृष्ठ पर ऐसी शिक्षा प्रकाशित की हो जो न केवल बुद्धिविरुद्ध और शून्य हो किन्तु ईश्वर की पवित्र सत्ता पर कंजूसी और पक्षपात का दोष लगाती हो।" पृ० १९

अतः वेद का ज्ञान ही तर्क की कसौटी पर उत्तीर्ण है और बुद्धि विरुद्ध नहीं तथा ईश्वर की दया से पूर्ण है क्योंकि ईश्वर में कंजूसी नहीं। आरम्भ सृष्टि में आया है जिस से सब के कल्याण के लिए हो और किसी के साथ ईश्वर का पक्षपात न हो।

(६) "इस के अतिरिक्त शान्ति के इच्छुक लोगों के लिए यह एक प्रसन्नता का स्थान है कि जितनी इसलाम में शिक्षा पाई जाती है। वह वैदिक धर्म की किसी न किसी शाखा प्रशाखा में विद्यमान है।" पृ० १४

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

अतः सिद्ध हुआ कि इसलाम संसार में कोई पूर्ण धर्म का प्रकाश नहीं कर सकता। क्योंकि उसकी शिक्षा तो अधूरी है। वह तो वैदिक धर्म की शाखा प्रशाखा में पूर्व से लिखी हुई है। वास्तव में तो वेद का धर्म ही पूर्ण और भूलों से रहित होने से परम पावन है।

परमात्मा आर्यावर्त, पाक, इसलामी देशों और संसार भर के अहमदी मित्रों तथा अन्य सभी लोगों को यह सामर्थ्य प्रदान करें कि वह अपने मनों को पवित्र करके स्वार्थ और पक्षपात की समाप्ति के साथ सत्य सिद्धांत युक्त वेद के धर्म को पूर्णतः स्वीकार करें। पं० लेखराम जी ने भगवान् से यही प्रार्थना सच्चे हृदय और पवित्र मन से की।

इस प्रार्थना की पुष्टि के लिए उन्होंने अपना जीवन वैदिक धर्म की बलिवेदी पर स्वाहा कहकर आहुत कर दिया। और सच्चे धर्म की सच्ची शहादत अपने खून से दे दी। जिस का प्रभाव यह हुआ कि मिर्ज़ा गुलाम अहमद के विचार परिवर्तित होते होते उनको वैदिक धर्म का शैदाई बना गए।

ऐ काश ! हमारी भी शाहदत प्रभु के सम्मुख स्वीकार हो और हमें वीर लेखराम की पदवी प्राप्त हो। पदवी नहीं, गुमनामी ही सही। किन्तु वैदिक धर्म की पवित्र बलिवेदी पर हमारी आहुति भी डाली जाकर उसके किंचित् प्रकाश से संसार में उजाला और वेदों का बोलबोला हो। परमेश्वर सत्य हृदय से की गई प्रार्थना को स्वीकार करें।

ओ३म् शम्

विदुषामनुचरोऽस्मि विनीतोऽहं भावत्कः शान्ति प्रकाशो नाम शास्त्रार्थ महारथी तिख्यातो हरयाणा प्रान्ते गुड़गांव (गुरुग्राम) वास्तव्यः।

—०—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

❀ ओ३म् ❀

भूमिका*

लेखक—अमर हुतात्मा श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी

[श्री महात्मा मुन्शी राम जी जिज्ञासु]

पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफ़िर की सब पुस्तकों को एकत्रित करके, एक संग्रह के रूप में प्रकाशित करने का जो गौरव श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने 'सद्धर्म-प्रचारक-प्रेस' को प्रदान किया है, वह सर्वथा उचित है। क्योंकि इस प्रेस के साथ आर्य मुसाफ़िर का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। न केवल यह कि अपने जीवन में ही पण्डित लेख राम जी ने अपनी रचनाओं का अधिकांश भाग जालन्धर में तैयार किया था; अपितु उनके वैदिक-धर्म पर प्राण न्योच्छावर करने के बाद भी उनके अन्तिम उपहार का प्रकाशन इसी प्रेस की ओर से किया गया था। और जितनी भी पुस्तकें या लघु-पुस्तिकायें वे पूर्ण अथवा अपूर्ण रूप में तैयार कर गये थे, वे सब भी इसी प्रेस की ओर से मुद्रित व प्रकाशित हो कर सत्यप्रिय जनों की सेवा में पहुँचती रही हैं।

आर्य समाज के साहित्य में श्री स्वामी दयानन्द जी के ग्रन्थों के बाद जिन ग्रन्थों की मांग सब से अधिक है, वे स्वर्गीय आर्य मुसाफिर के ग्रन्थ ही हैं। यह कोई आकस्मिक बात नहीं है कि बीसियों आर्य लेखकों में से केवल पण्डित लेख राम जी की ही रचनाओं को पढ़ने की रुचि उर्दू-शिक्षित जनों में सब से अधिक पाई जाती है। जिस उत्साह से किसी समय मुन्शी अलखधारी जी की रचनाओं को हमारे देश के विचारवान् पुरुष पढ़ा करते थे, उसी उत्साह से अब पण्डित लेख राम जी की रचनाओं को पढ़ा जाता है। श्री पण्डित जी की पुस्तकों के प्रेमियों में बड़ी संख्या तो हिन्दुओं की ही है; परन्तु सत्य और न्यायप्रिय मुसलमान सज्जन भी उन की पुस्तकों के अध्ययन में पर्याप्त मात्रा में संलग्न हैं। इस का कारण यह है कि श्री पण्डित लेख राम जी की लेखन-शैली बहुत रोचक और सर्वप्रिय है। इस के साथ ही उन की रचनाओं का प्रत्येक शब्द सच्चे हृदय से निकला है। और वह पाठकों के हृदय एवं मस्तिष्क पर आश्चर्यजनक प्रभाव डालता है।

वैदिक-धर्म के विरोधियों ने सर्वत्र यह प्रसिद्ध कर रखा है कि पण्डित लेख राम जी की लेखन-शैली बहुत अधिक कठोर है। और उनकी आलोचनायें संयम एवं शिष्ट-मर्यादाओं का उल्लंघन करने वाली हैं। परन्तु जब कभी भी उन की रचनाओं की जांच-पड़ताल का अवसर आया, तब उनके प्रत्येक विरोधी को अपने आधारशून्य एवं अनुचित आक्षेपों के लिये लज्जित होना पड़ा है। जिस समय देहली के डिप्टी कमिश्नर साहिब की अदालत में, देहली के मुसलमानों की तरफ़ से मुकद्दमा चलाया गया था, उस समय उक्त डिप्टी कमिश्नर महोदय ने, अपने सरिश्तेदार को घर पर बुलाकर बड़ी

*कुलियात आर्य मुसाफिर के सम्वत् १९६१ वि० तदनुसार सन् १९०४ के संस्करण से उद्धृत और अनुवादित।—अनुवादक।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

गम्भीरता और संलग्नतापूर्वक पण्डित जी की पुस्तकों के वे अँश सुने थे, जिन्हें मुहम्मदियों ने कठोर और आक्षेपजनक बतलाया था। अन्त में उक्त डिप्टी कमिश्नर महोदय ने अपने निर्णय में लिखा था कि मोटे तौर पर कुछ कठोर प्रतीत होने पर भी इस व्यक्ति की प्रतिपादन शैली ऐसी निर्दोष और परिमार्जित है कि यह अपनी ओर से किसी पर आक्रमण वा आक्षेप करता ही नहीं है। इसके साथ ही विरोधियों के आक्षेपों के उत्तर भी यह ऐसी उत्तमता और शिष्टता से देता है कि इस का कानून की पकड़ में आना तो एक तरफ़ रहा, प्रत्युत प्रत्येक न्यायप्रिय मनुष्य को इसकी प्रशंसा करनी पड़ती है।

पंजाब पुलिस के सुप्रसिद्ध अधिकारी स्वर्गीय श्री कृष्टी साहेब से जब मैं आर्य मुसाफिर के हत्यारे की खोज के सिलसिले में मिला था, तब उन्होंने बतलाया था कि मुसलमानों की शिकायतों पर सरकार ने दो-तीन बार श्री पण्डित लेखराम जी की पुस्तकों की जांच करवाई थी। और प्रत्येक बार यही परिणाम निकला था कि इन पुस्तकों में कोई भी बात ऐसी नहीं है, जो क़ानून की पकड़ में आती हो। हां, इन पुस्तकों का लेखक अपने धर्म का कुछ अधिक उत्साही-रक्षक अवश्य प्रतीत होता है। श्री कृष्टी ने यह भी बतलाया था कि सरकार को बहुत समय पहले ही यह ज्ञात हो गया था कि पण्डित लेखराम जी पर विरोधियों की तरफ़ से सभी प्रकार के आक्रमण किये जायेंगे। इस लिये पुलिस को ये गुप्त आदेश दिये गये थे कि सभी स्थानों पर उनकी रक्षा का विशेष ध्यान रखा जाये।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि सभी विरोधी, विशेष रूप से मुहम्मदी भाई पण्डित लेखराम जी को बदनाम करने की कोशिश क्यों करते रहे? और सब से बढ़ कर मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादियानी ने उन का विरोध क्यों किया? एवं ऐसा करने के लिये उन्हों ने घृणित से घृणित उपायों का अवलम्बन करने में भी कोई संकोच क्यों न किया? उत्तर के लिये हमें वह पत्र-व्यवहार पढ़ लेना चाहिये जोकि आर्य मुसाफ़िर ने मिर्ज़ा साहिब के साथ किया था। और जो 'अहमदी युक्तियों का खण्डन' (तकज़ीब बुराहीने अहमदिया) के अन्त में प्रकाशित हुआ है।

साधारणतया मुहमदियों के विरोध का कारण यह है कि वर्तमान काल में पण्डित लेख राम जी ने ही इस्लाम को सब से बड़ा धक्का लगाया। यद्यपि मुन्शी इन्द्रमणि मुरादाबादी भी बहुत बड़े मुन्शी थे। और उनकी लेखनी में विरोधियों को पूर्णतया पराजित करने वाला अपूर्व बल भी मौजूद था; परन्तु उनके लेख विरोधियों के विश्वासों और सिद्धान्तों को हिला नहीं सके। इसके विपरीत आर्य-मुसाफ़िर की शैली अद्भुत और अमोघ है। उन्हों ने अपनी एक-एक स्थापना के लिये बीसियों पुष्ट प्रमाण उपस्थित किये हैं। उन्होंने अपने परिणाम गहरे एवं विद्वत्तापूर्ण विवेचन के पश्चात् प्रस्तुत किये हैं। और उनके पक्ष में प्रबल ऐतिहासिक प्रमाण भी प्रस्तुत किये हैं। अस्तु, आर्यमुसाफिर के लेखों में जो प्रभाव तथा चमत्कार है, उसका अनुमान भली प्रकार से वे निष्पक्ष और न्यायप्रिय विद्वान् ही लगा सकते हैं, जिन के दोष पूर्ण विश्वासों तथा भ्रान्त सिद्धान्तों को उनकी अकाट्य युक्तियों ने जड़ से हिला दिया था।

पण्डित लेखराम जी की कृतियों की विस्तृत आलोचना करने का अवसर यह नहीं है। क्योंकि उनका जीवन चरित्र भी तैयार हो रहा है। और वह भी शीघ्र ही प्रकाश में आने वाला है। उसमें आर्यमुसाफ़िर की जीवनगाथा के साथ ही उनके लेखन-वैभव पर भी विस्तृत प्रकाश डाला जायेगा। यहां तो इतना ही अभीष्ट है कि बहुत व्यस्त रहते हुए और अनेक कठिनाइयों के होने पर भी पण्डित लेखराम

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

आयमुसाफ़िर ने ज्ञान का कितना बड़ा और कितना महत्वपूर्ण भण्डार सत्यप्रिय जनों के लाभ के लिये निर्मित कर दिया है ? निस्सन्देह उचित परिणामों पर पहुँचने के लिये श्री पण्डित लेखराम जी आर्य-मुसाफ़िर के पुरुषार्थ के परिणामस्वरूप जिज्ञासु जनों को बहुत अधिक आसानी हो गई है।

यद्यपि विषय-भेद के अनुसार इस संग्रह में आर्यमुसाफ़िर की रचनाओं को *तीन भागों में बांटा गया है, तथापि यह विभाजन काल क्रमानुसार नहीं है। पण्डित लेखराम जी ने जितनी पुस्तकें और लघु-पुस्तकें वैदिक सिद्धान्तों के सत्यस्वरूप को प्रकाशित करने के लिये लिखी थीं, उनका संग्रह प्रथम भाग में किया गया है। दूसरे भाग में उन सब रचनाओं का समावेश है, जो विभिन्न मत-मतान्तर-वादियों के अक्षेपों के उत्तर में रची गई थीं। तीसरे भाग में मुहमदी अक्षेपों के उत्तर में रची गई कृतियों का संकलन है। इन रचनाओं में से कोई एक भी ऐसी नहीं है, जिसका कुछ न कुछ, अपना स्वतन्त्र इतिहास नहीं है।

अनुसन्धान से पता चला है कि पण्डित लेखराम जी की साहित्य रचना की विशेष रुचि उनमें अपनी आरम्भिक अवस्था में ही मौजूद थी। पुस्तक रूप में जो उनकी सर्व-प्रथम रचना प्रकाश में आई थी, वह 'स्त्री शिक्षा' है। जो कि †इस संग्रह में चौथे अनुक्रम पर प्रकाशित है। इस लघु-रचना की भाषा इस बात का प्रमाण है कि तब तक आर्यमुसाफिर की शैली में वह ओज तथा प्रवाह वर्तमान न था, जो कि "हुज्जते-इस्लाम" में प्रकट हुआ। और जिसे देखकर अपने-पराये सभी चकित हो गये। ऐसा होने पर भी विश्वासों की दृढ़ता और संकल्प-शक्ति की प्रबलता तो पण्डित जी की आरम्भ की रचनाओं में भी भली प्रकार वर्तमान है। इसके बाद पण्डित जी पेशावर से लाहौर की ओर चले आये। फ़िरोज़पुर में उन्होंने 'आर्य-गज़ट' का सम्पादन-भार सम्भाला। उसी समय उन्हें मिर्ज़ा गुलाम अहमद की पुस्तकों के अवलोकन का अवसर मिला। और उन्होंने सत्य-धर्म के गौरव को प्रकट करने के लिये असीम उत्साह के साथ मिर्ज़ा साहिब के साथ अपना ऐतिहासिक पत्र-व्यवहार आरम्भ किया।

इस के पश्चात् पण्डित जी ने किस प्रकार मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादियानी की पोल खोली और एक कहावत के अनुसार झूठे को उसके घर तक पहुँचा दिया ? यह पण्डित जी की पुस्तकों के विज्ञपाठक भली प्रकार जानते हैं। इसी अवधि में पण्डित जी ने वह प्रसिद्ध ग्रन्थ तैयार किया जो कि "नुस्खाये ख़ब्ते अहमदिया" के नाम से प्रसिद्ध है। इसके विषय में मैंने कई मुसलमानों को यह कहते हुए सुना है कि इसके पश्चात् इसके जोड़ की कोई दूसरी पुस्तक पण्डित जी ने नहीं लिखी। इतना ही नहीं अपितु जिस "हुज्जते इस्लाम" नामक पुस्तक के प्रकाशन पर, मुहमदी लोगों ने पण्डित लेखराम जी को प्राण-हरण की धमकियां देनी आरम्भ कर दी थीं, कुछ लोग अब तक भी "नुस्खाये ख़ब्ते अहमदीया" को उस से भी बढ़ कर मानते हैं।

"तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया" के दोनों भागों के निर्माण का सम्पूर्ण इतिहास, उनके अन्दर ही लिख दिया गया है। "तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया" के दूसरे भाग की पाण्डु लिपि मुझे जिस अस्त-व्यस्त रूप में मिली थी, और उसके प्रकाशन में मुझे जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उनका उल्लेख मैंने उस पुस्तक की भूमिका में कर दिया है। "सृष्टि का इतिहास" (तारीख़े दुनिया) और "पुनर्जन्म" (सबूते तनासुख़) नामक ग्रन्थों की तैयारी में जो परिश्रम पण्डित जी को करना पड़ा था,

* मूल पुस्तक जो उर्दू में है, उसके तीन भाग हैं।

† मूल पुस्तक में चौथे अनुक्रम पर "स्त्रीशिक्षा" पुस्तक है।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

उसे मैं भली प्रकार जानता हूँ। इन पुस्तकों के पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि पण्डित लेखराम जी अंग्रेज़ी भाषा का एक शब्द भी नहीं जानते थे। ऐसा होने पर भी उन्होंने जिस उत्तमता से स्थान-स्थान पर अंग्रेज़ी ग्रन्थों के उद्धरण इन पुस्तकों में दिये हैं, उन से एक अनजान व्यक्ति तो यही परिणाम निकालेगा कि पण्डित लेखराम जी अंग्रेज़ी भाषा के भी बहुत बड़े विद्वान् थे।

पण्डित लेखराम जी का काम करने का ढंग आलसी और प्रमादी पुरुषों से सर्वथा भिन्न प्रकार का था। वे अंग्रेज़ी जानने वाले लोगों से निरन्तर उन विषयों पर वार्तालाप किया करते थे, जिनके विषय में उनको संसार के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध विद्वानों की सम्मतियों को जानने की आवश्यकता होती थी। इस प्रकार जब भी उनको अपने काम की कोई बात मालूम होती थी तब वे खोज करके उसके विषय में असली और प्रामाणिक पुस्तक को प्राप्त कर लेते थे। इसके बाद वे तीन चार पृथक्-पृथक् अंग्रेज़ी के विद्वानों से उसके आवश्यक अंशों का अनुवाद करवाते थे। और फिर भली प्रकार विचार एवं अर्थों की तुलना करके उसे अपनी पुस्तक में स्थान देते थे। इस प्रकार की खोज और ऐसे अनुसन्धान के लिये जिस संलग्नता, धैर्य एवं सन्तोष व शान्ति की आवश्यकता होती है, उस का कुछ अनुमान सूक्ष्म विषयों में रुचि रखने वाले सज्जन ही लगा सकते हैं। बोलने के प्रसंगों में तो पण्डित लेखराम जी बहुत अधिक उतावले हो जाया करते थे; परन्तु साहित्य-रचना के कार्यों में वे इतने अधिक गम्भीर और धैर्यशील दिखाई देते थे कि देखने वालों को आश्चर्य होने लगता था।

जब कभी पण्डित जी बाहिर यात्रा करके, सद्धर्म प्रचारक प्रेस जालन्धर में लौटा करते थे, तब उनका सर्व प्रथम आदेश यही होता था कि गत मास के सभी पत्र और पत्रिकायें प्रस्तुत करो। उन पत्र-पत्रिकाओं के सामने आते ही वे अपनी भूख-प्यास सब भूल जाया करते थे। जब तक वे उन का एक-एक शब्द पढ़ न लेते थे, और उनमें से अपने काम की बातों को निकाल न लेते थे, तब तक उनको चैन न आता था। कई बार ऐसा भी हुआ कि जिन बातों को मैंने सरसरी तौर पर देख कर छोड़ दिया था, उन का महत्व पण्डित लेख राम जी ने प्रकट किया। और कई बार तो मुझे लज्जित भी होना पड़ा। उन्होंने अपने व्यवहार से मुझे यह सिखाया कि संसार में कोई छोटी से छोटी घटना भी ऐसी नहीं है, जिससे कुछ उत्तम शिक्षा प्राप्त न हो सके।

जितनी पुस्तकों का प्रकाशन इस ग्रन्थ माला में किया जा रहा है, उन की रचना ही एक मनुष्य की विद्वत्ता और कर्तव्य-परायणता का एक बहुत बड़ा प्रमाण है। परन्तु इन सब की रचना करते हुए, इनके साथ ही साथ उन्होंने अपने सच्चे पथप्रदर्शक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के जीवन-चरित्र की सामग्री एकत्रित करने के लिये भारत के सभी भागों की कष्ट-साध्य यात्रायें भी की थीं। इसके परिणाम स्वरूप उन्होंने केवल सामग्री ही एकत्रित नहीं की; अपितु उन्होंने पाँच सौ बड़े पृष्ठों के लेख भी अपने सामने ही कातिब को लिखने के लिये सौंप दिये थे। उनके परिश्रम का अन्त यहां पर ही न था, अपने विचार के अनुसार तो उन्होंने अभी लेखन-कार्य का आरम्भ ही किया था। अपनी मृत्यु के बहुत वर्ष पूव से ही वे भारत वर्ष का एक प्रामाणिक इतिहास लिखने के लिये आवश्यक सामग्री का संग्रह कर रहे थे। उनके क़तल के बाद २३ अप्रेल सन् १८९७ ई० के समाचार पत्र सद्धर्म प्रचारक में मैंने इस विषय में लिखा था—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

"जब कभी किसी भारतीय विद्वान् के किसी योरोपीय-विद्या-संस्थान का सदस्य होने का समाचार आता है, तब स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या अब तक भी आर्य सन्तान में उच्च-कोटि के विचार-विमर्श, दार्शनिक खोज और तात्विक सिद्धान्त निरूपण की आवश्यक योग्यता मौजूद है ! जब तक डाक्टर जगदीशचन्द्र वसु की विद्युत-विद्या विषय खोज प्रकाश में न आई थी, तब तक कौन यह स्वीकार करता था कि आर्य सन्तान भी अपने अन्दर पदार्थ विद्या के तथ्यों और सूक्ष्म तत्वों को समझने की उच्च योग्यता रखती है। इस प्रकार विद्या और विज्ञान विषयक खोज के और भी छोटे बड़े कई क्षेत्र हैं, जिन में जब तक कोई भारतवासी विद्वान् अपना पग आगे नहीं बढ़ाता, तब तक किस को यह विश्वास ही नहीं होता कि ऋषियों की सन्तान के पास अभी तक भी खोज और तत्त्व निरूपण करने के लिये आवश्यक विद्या-बल और बौद्धिक-वैभव मौजूद है। इस में सन्देह नहीं कि हमारी प्रकट में अयोग्यता सूचक इस स्थिति का कारण केवल मात्र हम ही नहीं हैं। इसमें हमारी राजनैतिक दासता और हमारे विदेशी शासकों की नीति का बहुत अधिक प्रभाव भी कारण है। फिर भी हम स्वीकार करेंगे कि हमारे वश में भी बहुत कुछ है। भारतवर्ष एक आदर्श देश है। और अपनी विशेषताओं के लिये यह बहुत अधिक प्रसिद्ध है। सम्पूर्ण भू-मण्डल के ऋतु, जल-वायु, वृक्ष-वनस्पति, पशु-पक्षी और नाना प्रकार के मनुष्य इस भू-खण्ड में पाये जाते हैं। एक ऐसे बड़े भू-खण्ड को जिसे हम एक पृथक् महा भू-खण्ड भी कह सकते हैं, और जिस का इतिहास केवल मात्र विगत पन्द्रह, बीस या पच्चीस शताब्दियों का ही इतिहास नहीं है, जिस देश को ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति अर्थात् ज्ञान के सर्वप्रथम प्रकाश को प्राप्त करने का गौरव भी प्राप्त है, उस महा भू-खण्ड और प्राचीन महा देश में खोज की जितनी अधिक आवश्यकता है, वह एक सीमा तक ही किसी मनुष्य के विचार में आ सकती है। परन्तु खेद है कि ऐसा उत्तम अवसर प्राप्त होने पर भी हम लोगों की मनो-वृत्तियां सत्य की ओर अग्रसर नहीं होती हैं।

यदि हिमालय की अज्ञात गुफाओं और गौरी शंकर की गगन चुम्बी चोटियों का पता लगाना हो, तो उसके लिये खोज-समितियां विलायत से बनकर आती हैं, यदि जालन्धर का इतिहास जानना हो तो उसके लिये परसर साहेब की बन्दोबस्त की रिपोर्ट पढ़नी पड़ती है। क्या हमारे लिये यह शर्म की बात नहीं है कि हमें अपने रस्म-रिवाजों को जानने के लिये भी विदेशियों की ही शरण ग्रहण करनी पड़ती है। यही कारण है कि अंग्रेजों और अन्य विदेशी विद्वानों की बहु मूल्य और प्रशंसनीय अनेक विध खोज के बाद अब तक भी हमारे महान् देश का कोई प्रामाणिक इतिहास मौजूद नहीं है। इस में सन्देह नहीं कि हमें अपने विदेशी शासकों का हार्दिक धन्यवाद करना चाहिये। इस लिये कि उन्होंने हमारी आँखें खोल दीं। और हमारे काम की बहुत सी महत्वपूर्ण सामग्री भी उन्होंने अपनी कष्टपूर्ण खोज के आधार पर प्रस्तुत कर दी। फिर भी इतिहास का अभाव तो अपने स्थान पर ज्यों का त्यों मौजूद ही है। क्या कोई भारतीय विद्वान् यह कह सकता है कि हमारे देश का कोई प्रामाणिक इतिहास ऐसा मौजूद है, जिस पर पूरा-पूरा विश्वास किया जा सके। और जो भारतीय इतिहास की विलुप्त कड़ियों को जोड़ दे ? जो हमें हमारे जातीय इतिहास की सच्ची-सच्ची गौरव-गाथा सुनाकर हमें सच्ची उन्नति के लिये प्रेरित तथा अग्रसर कर सके ?

विदेशी विद्वानों ने भारतवर्ष के जितने भी इतिहास लिखे हैं, उन में उन के अपने विचार, अपनी भ्रान्तियां और अपने-अपने पक्षपात भी समाविष्ट हैं। ऐसे विद्वानों में हमें कर्नल टाड साहेब का नाम

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

विशेष सम्मान के साथ स्मरण करना चाहिये। जिन्हों ने अपनी प्रेम भरी खोज के द्वारा राजपूतों की वीरता को सारे संसार में प्रसिद्ध कर दिया। परन्तु क्या भारत में कर्नल टाड के समकक्ष कोई दूसरा विद्वान् पैदा हुआ? हमें शोक से कहना पड़ता है कि नहीं। हम बड़े खेद के साथ देखते हैं कि हमारे देश के धनपतियों के बेटे इस ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते। विद्या और विज्ञान आदि विषयों में आवश्यक खोज करने वालों के प्रति उचित आदर-सम्मान का भाव, उन की सुख-सुविधा और उन को अपने कार्यों में उत्साहित करने का विचार भी अभी तक हमारे देशवासियों में उत्पन्न नहीं हुआ है। पाश्चात्य देशों के अनुसन्धान कर्त्ता विद्वान् अपनी-अपनी सरकारों एवं अपने-अपने देशवासियों के सहयोग से क्या कुछ नहीं कर दिखाते? परन्तु दुर्भाग्यवश अपने देश की सरकार से हम तो कुछ भी आशा नहीं कर सकते। और हमारे देशवासियों की तो इस प्रकार की खोज में कोई रुचि ही नहीं है।

ये ऐसी बड़ी-बड़ी कठिनाइयां हैं, जिन के कारण एक साधारण व्यक्ति कुछ भी नहीं कर सकता। परन्तु फिर भी यह कहावत प्रसिद्ध है कि जो अपनी मदद अपने आप करता है, ईश्वर भी उस की मदद करता है। ऐसी कौन सी कठिनाई है, जो पुरुषार्थ के सामने ठहर सकती है? हम ने ऐसे भारतीय विद्वान् बहुत ही कम देखे हैं, जिन में सत्य-प्रेम का वह उत्साह विद्यमान हो, जो पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर के हृदय और मस्तिष्क को प्रेरित किया करता था। पण्डित लेखराम ने भारतवर्ष के क्रमबद्ध और प्रामाणिक इतिहास की आवश्यकता को बहुत अधिक अनुभव किया था। उन का विचार था कि महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र तैयार करने के पश्चात् फिर एक बड़ी, भारत व्यापी यात्रा का आरम्भ करेंगे और भारतवर्ष का प्रामाणिक इतिहास लिखने के लिये आवश्यक सामग्री का संचय करेंगे। इस बड़े कार्य के अनुष्ठान के लिये उन्होंने भारतीय इतिहास के विषय में बहुत से ग्रन्थों का संग्रह भी आरम्भ कर रखा था। खेद है कि दुराग्रही और निर्दयी हत्यारे ने अपने खूंखार छुरे से इन सब महत्वपूर्ण आयोजनों का अन्त कर दिया। परन्तु मैं सोचता हूँ कि हमारे लिये क्या यह भी आर्य मुसाफिर की एक वसीयत नहीं है?

क्योंकि हमारे धर्म की प्रवर्त्तना सृष्टि के आरम्भ में हुई थी, और वेदों का गम्भीर नाद सर्व प्रथम हिमालय की चोटी से उतर कर, आर्यवर्त में ही फैला था। इस लिए आर्यवर्त का सम्पूर्ण और प्रामाणिक इतिहास तैयार करना भी आर्य पुरुषों का ही काम होना चाहिये। इस समय आर्यसमाज में सैंकड़ों उच्च शिक्षा प्राप्त विद्वान् मौजूद हैं। उन में से बीसियों ऐसे हैं, जो थोड़ा-सा ही यत्न करके संस्कृत भाषा में भी विशेष योग्यता प्राप्त कर सकते हैं। सम्भवतः कुछ विद्वान् ऐसे भी मिल जायेंगे, जिन्हें अपनी आजीविका की भी कोई चिन्ता नहीं है। इतना ही नहीं वे इस काम पर पर्याप्त रुपया खर्च कर सकते हैं। और इस काम के लिये यथेष्ट समय भी दे सकते हैं। क्या इन विद्वानों में से कोई एक भी आर्य मुसाफिर की अन्तिम वसीयत को पूरा करने के लिये कार्य क्षेत्र में न उतरेगा? इसमें सन्देह नहीं कि इस कार्य का सम्यक्तया सम्पादन करने के लिये धैर्य, एकाग्रता, उत्साह और साहस आदि सद्गुणों का होना आवश्यक है। और इस में भी सन्देह नहीं कि जो कोई भी विद्वान् इस काम को अपने हाथ में लेगा, उसे बहुत वर्षों तक एकान्त में रहना और कष्टों को सहना होगा; परन्तु यदि वह अपने कार्य में योग्यता पूर्वक सफल हो जायेगा, तो वह आर्यावर्त के क्रमबद्ध इतिहास को तैयार करके एक बहुत बड़ा ज्ञान-कोष अपने देशवासियों के लिये छोड़ जायगा। ऐसा होने पर, जब आर्य-सन्तान अपने विगत गौरव का पूर्ण परिज्ञान प्राप्त करेगी, और अपनी वर्तमान अवस्था पर विचार करेगी, एवं, अपने रोग को

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

समझ कर, जब वह उसका उचित उपचार आरम्भ करेगी, तब उस वीर पुरुष का उद्देश्य अवश्य ही पूरा हो जायेगा। हम ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि वह किसी सुयोग्य आर्यपुरुष के हृदय को प्रेरित करे, जिससे वैदिक-धर्म के प्रचार कार्य का एक कठिन उद्देश्य पूरा हो जावे।"

लग-भग सात वर्ष हो गये, जब मैंने ऊपर लिखी प्रार्थना प्रकाशित की थी, और अपना आशा-वाद प्रकट किया था। दयामय परमेश्वर शुभकर्मों के अनुष्ठान के लिये योग्य जनों को प्रेरित तो निरन्तर ही किया करते हैं; परन्तु तब से अब तक कोई विद्वान् भी भारतवर्ष के प्रामाणिक एवं क्रमबद्ध इतिहास निर्माण के क्षेत्र में उतरा नहीं है। ऐसी अवस्था में यदि धर्मवीर पण्डित लेखराम आर्य मुसाफ़िर को किंचित् अधिक व्यग्रता के साथ स्मरण किया जाये, तो ऐसा कौनसा कठोर हृदय होगा, जो इस पुण्य-स्मरण में शामिल न होगा ?

आर्य मुसाफिर की रचनाओं को प्रकाशित करके, इतने कम मूल्य में वितरित करने का मुख्य उद्देश्य यही है कि प्रत्येक धर्म-पिपासु-जन के पास इस माला के सभी ग्रन्थ अवश्य ही पहुँच जायें। जो लोग इस महत्व पूर्ण ग्रन्थ-माला को मूल्य देकर प्राप्त करने में असमर्थ हैं, उन तक इस ग्रन्थ-माला को पहुँचाना साधन-सम्पन्न आर्य पुरुषों का काम है। जो लोग आर्य सन्तान को मुहमदी और ईसाई प्रभृति मतवालों के फन्दों से छुड़ा कर, उन्हें सदा के लिए सबल एवं सुरक्षित बनाना चाहते हैं, उनका यह आवश्यक कर्तव्य है कि वे इस ग्रन्थ-माला की अधिक से अधिक प्रतियां मंगवायें। और उन्हें बिना मूल्य वितरित करके, पुण्य एवं यश के भागी बनें।

—:०:—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

श्री पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफ़िर

का

संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त

[स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की लेखनी से]

संसार की उन्नति का इतिहास सदा ही महापुरुषों के रक्त से तैयार होता रहा है। जिन शूरवीरों ने धर्म के लिये अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया, यहां तक कि अपने प्यारे सिद्धान्तों की रक्षा के लिये, अपने प्रिय प्राणों को न्योछावर करने में भी संकोच नहीं किया, उनकी धर्म-परायणता ने उनके विचारों के प्रसार के लिये विद्युत से भी बढ़कर कार्य किया है। यह एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि किसी भी समुदाय के जीवन का अनुमान उसके त्याग, तप और बलिदान के आधार पर ही किया जा सकता है। प्रत्येक जीवित समाज और समुदाय अपने जीवन का प्रमाण इस प्रकार के बलिदानों के रूप में ही प्रस्तुत किया करता है। किसी भी सत्य के प्रचार को अपने विरोधियों के हाथों जितनी अधिक विपत्तियां सहन करनी पड़ती हैं, दूसरे शब्दों में, किसी भी सत्य प्रचारक ने अपने प्रचारित सत्य के पक्ष में जितनी भी अधिक प्रबल शहादत प्रस्तुत की है, उसके सत्य का उतना ही अधिक प्रसार संसार में हुआ है। अतः, धन्य है, वह समुदाय और वह समाज जिसके प्रवर्तकों और प्रचारकों ने अपने प्रिय प्राणों को बलिदान करके, और धर्म के मार्ग में अपना खून बहा कर, अपनी और अपने सिद्धान्तों की सत्यता को प्रकट किया है।

अभी पूरे पच्चीस वर्ष भी नहीं बीते, जब कि आर्यसमाज वैदिक सत्य का प्रदीप हाथ में लेकर, मानव जाति के कल्याण और अभ्युत्थान के लिये सन्नद्ध हुआ था। स्वामी दयानन्द के गम्भीर नाद ने कुम्भकरण की नींद में सोई पड़ी हुई भारत-सन्तान को जगा दिया। आलस्य के स्थान पर पुरुषार्थ का प्रकाश फैला। सत्य-धर्म की पिपासा प्रत्येक हृदय में भड़क उठी। वैदिक ज्योति ने अन्धकार का विनाश आरम्भ कर दिया। सम्पूर्ण भारत राष्ट्र में एक अपूर्व हलचल मच गई। विरोधियों की ओर से होने वाले भीषणतम आक्रमणों को शान्ति और आश्चर्यजनक धैर्य से सहन करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने सिद्धान्तों का प्रचार किया। परन्तु ससीम मनुष्य के कार्य भी तो सीमा वाले ही होते हैं। यदि महर्षि दयानन्द अपने आत्म-बलिदान के रूप में अपने अन्तिम त्याग, तप और बलिदान का परिचय देकर अपने सिद्धान्तों की सत्यता की साक्षी न देते, तो वह प्रबल आन्दोलन, जो उनके बाद सम्पूर्ण भारत में उठा, फैला और ग्राम-ग्राम एवं घर-घर में पहुँचा, कभी भी दिखाई न देता। एक महर्षि की मृत्यु ने हज़ारों क्या लाखों जीवन-ज्योतियों का काम किया। वैदिक-धर्म-प्रचार की अग्नि प्रचण्ड से प्रचण्डतम होती चली गई।

यद्यपि प्रत्येक उत्तम आन्दोलन को महापुरुषों के आत्म बलिदानों के परिणाम स्वरूप अपूर्व

www.aryamantavya.in

बल और प्रोत्साहन प्राप्त होता है, परन्तु हमें भूलना न चाहिये कि उस बल और प्रोत्साहन के मार्ग में कुछ छोटी-बड़ी बाधायें भी मौजूद होती हैं। जिन को दूर करने के लिये अन्य धर्मवीरों के बलिदान अपेक्षित होते हैं। आर्यसमाज के आन्दोलन के मार्ग में भी इसी प्रकार की बाधायें आ-आ कर उपस्थित होती रहती हैं। और प्रभु की दिव्य-व्यवस्था एवं हमारे कर्मों के अनुसार उन बाधाओं के निवारण के लिये नये-नये बलिदानों की आवश्यकता भी लगी ही रहती है। इसी प्रकार की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये महर्षि दयानन्द के बलिदान के छः वर्ष पश्चात् मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी ने तिल-तिल करके आत्म-बलिदान प्रस्तुत किया था। छः वर्ष का समय और बीत गया। फिर कुछ नई बाधायें आ उपस्थित हुईं। फिर से बलिदान की आवश्यकता हुई। नई बाधाओं के निवारण के लिये धर्मवीर पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफ़िर ने छः मार्च सन् १८९७ ई० की सन्ध्या वेला में फिर अपना जीवन बलिदान किया। और सचमुच ही अपने पवित्र रक्त के द्वारा वैदिक-धर्म की सत्यता एवं महत्ता का एक नया तथा प्रभाव पूर्ण प्रमाण अंकित कर दिया।

यद्यपि धर्मवीर पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफ़िर की गणना उस वर्ग में नहीं हो सकती जो कि बुद्ध, शंकर, नानक और दयानन्द प्रभृति के लिये ही सुरक्षित है। और जिसमें वे अपने-अपने चन्द्रमा रूपी स्वरूप में संसार को प्रकाश प्रदान करते हुए आनन्द की वर्षा कर रहे हैं। फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि श्री पण्डित लेखराम जी उन उज्वल नक्षत्रों में से एक हैं, जो कि ऐसे चन्द्रमाओं की शोभा को बढ़ाने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझते हैं। इस लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि श्री पण्डित लेखराम जी का संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त इस पुस्तक-माला के माननीय पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किया जाये। जिससे कि वे पुस्तक-माला के प्रणेता के जीवन-वृत्त के साथ ही साथ उसकी उस उदात्त भावना और कर्तव्य-निष्ठा का भी परिचय प्राप्त करलें, जो कि इस पुस्तक माला की मूल प्रेरक बनी थी।

तहसील चकवाल जिला जेहलम के एक अप्रसिद्ध ग्राम "सैयदपुर" नाम में ८ चैत संवत १९१५ वि० में शुक्रवार के दिन, एक मोहियाल ब्राह्मण परिवार में एक लड़का उत्पन्न हुआ। उस समय कौन यह कह सकता था कि उस छोटे-से शिशु के अन्दर कैसी-कैसी अद्भुत शक्तियां वर्तमान हैं? पाँचवें वर्ष में वह बालक विद्या प्राप्ति के लिये फ़ारसी-भाषा के विद्यालय में बैठाया गया। माता पिता ने उस का नाम लेखराम रखा। पन्द्रह वर्ष का होने तक यह लड़का भी अन्य लड़कों जैसा ही एक सामान्य विद्यार्थी था; तथापि लेखराम पढ़ने लिखने में अधिक उत्साही था। और उस की स्मरण-शक्ति भी दूसरों से बढ़ चढ़ कर थी। उस की एक विशेषता भी थी। जिस पर उस के सभी अभिभावक आश्चर्य किया करते थे। वह यह कि उस के स्वभाव में बहुत अधिक दृढ़ता पाई जाती थी, जो कि कभी-कभी हठ का रूप भी धारण कर लेती थी।

एक बार, जब उस की आयु सात या आठ वर्ष की ही थी, विद्यालय में पढ़ते समय लेखराम को प्यास लगी। इस पर उस ने घर जाने की छुट्टी मांगी। अध्यापक ने कहा—"विद्यालय में पानी मौजूद है। यहां ही पी लो।" परन्तु लेखराम ने पानी न पिया। प्यासा बैठा रहा। घर जा कर ही पानी पिया।

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में लेखराम जी अपने चाचा श्री गण्डा राम जी के पास पुलिस का काम

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

सीखने के लिये चले गये। इस समय * श्री गण्डा राम जी पेशावर में डिप्टी इन्स्पैक्टर पुलिस हैं। उन्हीं दिनों एक बूढ़े सिख भाई से, जोकि श्री गण्डा राम जी के आधीन कार्य करता था, लेखराम का परिचय हो गया। वह बड़े सवेरे उठकर, स्नान आदि करके गुरुमुखी अक्षरों में गीता की पोथी का पाठ किया करता था। उस सिख उपासक के सम्पर्क में रहकर, लेखराम ने समाधि लगानी आरम्भ कर दी। उन के चाचा जी ने बतलाया कि एक दिन लेखराम जी समाधि में ऐसे मग्न हुए कि चारपाई से नीचे गिर पड़े। फिर भी उनकी समाधि न खुली।

सन् १८७६ ई० के लग-भग लेखराम जी पुलिस विभाग में नौकर हुए और कुछ काल पश्चात् नकशा-नवीस-सारजेण्ट नियुक्त किये गये। धर्म-पिपासा की अनुभूतियों ने उसी समय अपनी छटा दिखानी आरम्भ कर दी थी। अस्तु, सन् १८८० ई० में उन्होंने काशी से गीता-पुस्तक मंगवाई। उस को पढ़ने और उस के श्लोकों पर गहरा-मनन करने का कार्यक्रम बन गया। रोटी एक ही समय अपने हाथ से पका कर खाते थे। और कृष्ण-कृष्ण का जाप किया करते थे। उसी वर्ष, जबकि उन की आयु लग-भग बीस या बाईस वर्ष की थी, माता-पिता ने विवाह के लिये ज़ोर देना आरम्भ किया। सगाई तो पहले ही हो चुकी थी। परन्तु लेखराम के सिर पर तो दूसरी ही धुन सवार थी। विवाह की बात चलते ही उस ने नौकरी छोड़ने, और मथुरा वृन्दावन की ओर जाने का निश्चय कर लिया। सम्बन्धियों ने पत्र लिख-लिख कर बहुत ऊँच-नीच की बातें समझाईं। परन्तु मोक्षलाभ के उत्साह की अग्नि अधिकाधिक प्रचण्ड होती चली गई। अन्त में पण्डित लेखराम के चाचा अपने थाने के कामकाज छोड़ कर समझाने के लिये आये। इस पर पण्डित लेखराम ने अपने चाचा को एक दृष्टान्त सुनाया। जो कि योग की पुस्तकों में पाया जाता है। वह इस प्रकार है :—

"एक था राजा। उस के पास नट आये, तमाशा दिखाने के लिये। राजा बोला! योगी की नक़ल उतारो। पाँच सौ रुपये इनाम मिलेगा। नट ने पूरा योगी बनकर दिखा दिया। परन्तु जिस समय नट की समाधि खुली, उसने तुरन्त ही इनाम की आशा से अपना हाथ फैला दिया।"

यह दृष्टान्त सुना कर लेखराम जी ने कहा यदि मैं गृहस्थ के बन्धनों में उलझ जाऊंगा, तो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल न हो सकूंगा। उस की दृढ़ता के सामने घर वालों ने अपनी हार मान ली। उन की मंगेतर का विवाह विवश हो कर उन के छोटे भाई से किया गया।†

इस घटना के कुछ काल पश्चात् लेखराम जी को श्री कन्हैया लाल जी अलखधारी की पुस्तकें पढ़ने का चस्का लगा। श्री मुन्शी इन्द्रमणि जी मुरादाबादी की पुस्तकें तो वे इससे पूर्व ही पढ़ चुके थे। और मुहम्मदी लोगों के साथ धार्मिक विषयों पर पूछताछ तथा वाद-विवाद का कार्य भी वे आरम्भ कर चुके थे। श्री अलखधारी जी की एक पुस्तक में स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की प्रशंसा लेखराम जी ने पढ़ी। कुछ समाचार-पत्रों के लेख पढ़ने पर उस प्रशंसा की पुष्टि भी हो गई। लेखराम जी ने तुरन्त ही स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के ग्रन्थ मंगवाये। और मनोयोग पूर्वक उनका अध्ययन आरम्भ कर दिया। ज्यों-ज्यों धर्म के मर्म अधिकाधिक मालूम होते गये, त्यों-त्यों श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती

* सन् १९०३ ई० में।—अनुवादक।

† चौबीस वर्ष की आयु में लेखराम जी ने श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के साथ विवाह कर लिया था। इस का उल्लेख आगे "सती का जीवन" शीर्षक लेख में मिलेगा। —अनुवादक।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

के दर्शनों के लिये उन की लालसा और व्यग्रता भी बढ़ती चली गई। दिल बे काबू हो गया। अन्त में उन्होंने सन् १८८१ ई० में पेशावर में आर्य समाज स्थापित किया। फिर एक महीने का अवकाश प्राप्त किया। और श्री स्वामी जी महाराज के दर्शनों के लिए चल दिये।

लाहौर, अमृतसर, मेरठ आदि आर्य समाजों में होते हुए लेखराम जी अजमेर पहुँचे। वहां महर्षि दयानन्द जी के दर्शन एवं उनसे वार्तालाप करके, उन्होंने अपने मन के सम्पूर्ण संशय निवृत्त किये। लौटने पर उन्होंने एक पत्र "धर्मोपदेश" वैदिक-धर्म के प्रचार के लिये निकाला और तन, मन, एवं धन से आर्य समाज पेशावर की उन्नति में जुट गये। पुलिस की नौकरी के दिनों में ही अपनी स्पष्ट-वादिता के लिये उन्होंने भरपूर प्रसिद्धि प्राप्त करली। धार्मिक वार्तालापों और वादविवादों में वे सांसारिक पद-मर्यादा आदि के आधार पर किसी का कुछ भी लिहाज न करते थे। शराब की बुराइयों की रोक-थाम करने के उद्देश्य से एक बड़ा सम्मेलन आयोजित किया गया। ज़िले के सब मुख्य अधिकारी और सेना के कमाण्डिंग अफसर भी उपस्थित थे। पण्डित लेखराम जी का ओजस्वी भाषण उस सम्मेलन में सभी को आश्चर्य-चकित कर देने वाला था। सैनिकों पर उनके भाषण का प्रभाव बहुत ही उत्तम हुआ।

पण्डित लेखराम जी की प्रकृति आरम्भ से ही स्वतन्त्र थी। इस लिए पक्षपाती और विद्वेषी अधिकारियों से उनकी बनती न थी। सन् १८८२ ई० के आरम्भ में उनकी बदली पेशावर से देहात में कर दी गई। फिर भी लेख भेज-भेजकर लेखराम जी ने "धर्मोपदेश" का प्रकाशन जारी रखा। अन्त में आर्य समाज पेशावर ने व्यय-भार को सहन करने में असमर्थता प्रकट करते हुए "धर्मोपदेश" को बन्द करने का प्रस्ताव किया। उसके विषय में पण्डित लेखराम जी ने १२ मार्च सन १८८३ ई० को जो पत्र अपने चाचा के नाम लिखा था, उस से ज्ञात होता है कि अपनी आय के बहुत कम होने पर भी, पण्डित जी "धर्मोपदेश" के व्यय का कुछ भाग स्वयं वहन करने के लिये भी तैयार हो गये थे। परन्तु आर्य समाज पेशावर के सहमत न होने के कारण यह पत्र उसी वर्ष बन्द हो गया था।

सन् १८८४ ई० के आरम्भ में ही वैदिक-धर्म के सुप्रकाश ने लेखराम जी के हृदय-मन्दिर को प्रकाशित कर दिया था। उस प्रकाश का रूप दिन प्रतिदिन अधिक प्रचण्डता धारण करता हुआ निरन्तर ही निखरता जा रहा था। अपनी पुलिस की नौकरी से भी उन्हें अरुचि हो गई थी। सम्बन्धियों, मित्रों और सरकारी अधिकारियों के समझाने पर भी लेखराम जी अपने विचारों में दृढ़ रहे। नवम्बर सन् १८८४ ई० में त्याग-पत्र देकर उन्होंने मनुष्यों की दासता से छुटकारा प्राप्त कर लिया और स्वतन्त्रता का आनन्द लेने लगे।

पहले वे लाहौर पधारे और कुछ समय तक संस्कृत-व्याकरण पढ़ते रहे। फिर वे "आर्य गज़ट" के सम्पादक नियुक्त होकर फिरोज़पुर चले गये। उस समय उर्दू का एकमात्र पत्र यह आर्य-गज़ट ही था। पण्डित लेखराम जी ने जिस उत्तमता से, तब आर्य गज़ट को चलाया, उसका प्रमाण आर्यगज़ट की फाईल को देखने से मिलता है। उनकी लेखनी तो सत्य के प्रचार में उसी समय से संलग्न हो चुकी थी, जब वे आर्य समाज के सभासद बने थे। वे इस से पूर्व ही सन् १८८३ ई० में "विधवाओं की पुकार" (नवीदे बेवगान) नामक पुस्तक भी लिख चुके थे।

पण्डित लेखराम जी की वह सर्व प्रथम पुस्तक जिसने उन्हें सम्पूर्ण आर्यवर्त में प्रसिद्ध कर दिया, और जिसने आर्य-सन्तान के मुरझाये हुए हृदय को नव-जीवन प्रदान करके प्रफुल्लित कर दिया, वह थी "तकज़ीबे बुराहीने अहमदिया" इसमें पण्डित जी ने मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद कादियानी की निरर्थक

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

गर्वोक्तियों और मन्तव्यों का खण्डन करते हुए वैदिक-धर्म की महत्ता को भारतवासियों के हृदय पर भली प्रकार अंकित कर दिया है। इसके बाद उन्होंने "नुस्खाये खब्ते अहमदिया, क्रिश्चियन-मत-दर्पण और सबूते तनासुख़" प्रभृति कई बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखीं।

इनके साथ ही उन्हों ने बीसियों पुस्तिकायें भी लिखीं, जिनमें ईसाई, मुहमदी और पौराणिक प्रभृति विरोधियों के आक्षेपों के दान्त-तोड़ उत्तर दिये गये थे। परन्तु इस सम्पूर्ण अवधि में क्या पण्डित लेखराम जी किसी एक ही स्थान पर जमकर बैठे रहे थे? क्या उन्होंने किसी पुस्तकालय की सहायता से अपने ग्रन्थ रचे थे? नहीं, वे तो चिरकाल से मुसाफिर बने आर्यावर्त के विभिन्न नगरों में, ग्रामों में, वनों और पहाड़ों में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जीवन चरित्र के लिये सामग्री का संचयन करते हुए दौड़ते फिर रहे थे। इसी लिये उन्होंने अपना नाम ही "आर्य मुसाफ़िर" रख लिया था। आवश्यक सामग्री एवं साधनों के बिना, पुस्तकालयों की सहायता के पूर्ण अभाव में और निरन्तर कष्ट-साध्य यात्रा प्रसंगों में रहकर, सैंकड़ों व्याख्यान देते हुए और शास्त्रार्थ करते हुए भी पण्डित लेखराम जी ने वह काम करके दिखा दिया जो बड़े-बड़े साधन सम्पन्न विद्वानों से भी न हो सका।

धार्मिक विषयों में अनुसन्धान करने की प्रबल रुचि पण्डित लेखराम जी में लड़कपन से ही मौजूद थी। यही कारण है कि जब महर्षि दयानन्द के जीवन-चरित्र के लिए घटनाओं और आवश्यक सामग्री का संचय करने की आवश्यकता हुई, तब पण्डित लेखराम जी के अतिरिक्त और कोई भी व्यक्ति उस काम के लिये उपयुक्त न समझा गया। उस समय से विभिन्न प्रदेशों में वैदिक-धर्म का प्रचार करते हुए आर्य मुसाफिर ने जो प्रसिद्धि प्राप्त की, वह शायद ही कभी किसी उपदेशक को प्राप्त हुई होगी। वैदिक-धर्म की महत्ता को स्वीकार करने के बाद, पण्डित लेखराम जी का जीवन एक सार्वजनिक जीवन बन गया था। इस लिए उन के सार्वजनिक जीवन का विवरण इस छोटे से लेख में प्रस्तुत करना, हमारे लिये सम्भव नहीं है। यहां तो हम केवल यही दिखाना चाहते हैं कि पण्डित लेखराम जी का जीवन इस प्रकार का था कि प्रत्येक मत वा पक्ष के अनुयाई को न केवल यह कि उनका सम्मान करना चाहिये; अपितु सत्य प्रेमी जनों को उनके जीवन से शिक्षा भी ग्रहण करनी चाहिये।

मुहम्मदी-मत की पड़ताल आर्य मुसाफ़िर ने विशेष रूप से की थी। इस लिये उन की अधिकांश रचनायें उस के विषय में ही हैं। पण्डित लेखराम जी की लेखनशैली की यह विशेषता है कि वे पहल नहीं करते। अर्थात् अपनी ओर से किसी के ऊपर आक्रमण नहीं करते। उन्हों ने अपनी खण्डनात्मक सभी पुस्तकें विरोधियों के सर्वथा अनुचित और तीव्र आक्षेपों व आक्रमणों के उत्तर में ही लिखी हैं। इस लिये कोई भी न्याय-प्रिय व्यक्ति उन के विरुद्ध कटुता वा कठोरता का आक्षेप नहीं कर सकता। परन्तु कुछ मुहम्मदी प्रचारकों ने, विशेष रूप से मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी ने पण्डित जी के लेखों तथा ग्रन्थो से घबराकर, कठोरता के दोष लगाने और मुहम्मदी तलवार से उन्हें धमकाना आरम्भ कर रखा था। पण्डित जी की प्रभावपूर्ण युक्तियों से घबरा कर मुल्लां-मौलानाओं ने अपने भोले-भाले मत वालों को बहकाना और उकसाना भी आरम्भ कर रखा था। पण्डित लेखराम जी की लेखनी की गति को रोकने के लिये कई उपाय किये गये थे। अदालत का आश्रय लेने से भी विरोधी जन चूके नहीं थे। अन्त में जब उनके सभी उपाय व्यर्थ हो गये, तब उन्हें एक दुष्ट, धोकेबाज़ मुसलमान के खंजर का शिकार बना दिया गया। इस प्रकार जड़ता और मूर्खता ने प्रगति और बुद्धिवाद पर विजय प्राप्त करने

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

का प्रयत्न किया। पण्डित लेखराम जी का भौतिक शरीर लुप्त हो गया। वे हाथ, जिन्हों ने लेखनी उठा कर पक्षपातियों और सम्प्रदायवादियों के मूढ़ विश्वासों को चकनाचूर कर दिया था, अब फिर कभी भी अपनी लेखनी को न उठा सकेंगे। किन्तु फिर भी सत्य की सीधी काट को रोकने का सामर्थ्य किस में है ?

श्री पण्डित लेखराम जी एक महान् कर्मयोगी थे। इसका प्रमाण इस से बढ़कर और क्या हो सकता है कि लगभग बारह वर्ष के समय में लगातार प्रचार कार्य करते हुए उन्होंने महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र के लिये लगभग तीन हज़ार पृष्ठ की सामग्री एकत्रित की। इस के साथ ही बहुत-सी श्रेष्ठ पुस्तकें भी लिखीं। वे और भी कई सौ पृष्ठों की लेख-सामग्री तैयार करके छोड़ गये थे। अपने कर्तव्य पालन की धुन में वे दिन रात एक कर देते थे। उनकी स्वतन्त्रवृत्ति का संकेत हम पहले ही कर चुके हैं। धार्मिक बातों में बहुत दृढ़ होने पर भी उन का हृदय बहुत कोमल था। किसी को कष्ट में देख कर वे द्रवित हुए बिना न रहते थे। अधिक लेख विस्तार का तो यहां स्थान नहीं है, फिर भी उनकी दुर्बलता को भी हमें जान लेना चाहिये। उन के साहस, इन्द्रिय दमन, सत्यविश्वास और ऊँचे आध्यात्म-ज्ञान ने उन्हें वैदिक-धर्म का ऐसा दृढ़ अनुयाई बना दिया था कि लोग उन्हें पक्षपाती समझने लगे थे। जब उनका यह मनोभाव जागता था, तब दूसरों की दुर्बलताओं को क्षमा करना उन के वश में न रहता था। अवैदिक सिद्धान्तों की प्रशंसा सुन कर वे चुप नहीं रह सकते थे। वे कभी-कभी प्रतिपक्षियों की सामाजिक पद-मर्यादा का कुछ भी विचार न करके, उनके ऊपर निर्भय हो कर झपट पड़ते थे। इसी लिये लाला कांशी राम जी ने, जोकि ब्राह्मसमाजी और पंडित लेखराम जी के मित्र थे, पण्डित जी को आर्य समाज के अली * की पदवी प्रदान कर रखी थी। परन्तु पण्डित जी की यह दुर्बलता उन के व्याख्यानों में ही प्रकट होती थी। उन की पुस्तकों में तो इस दुर्बलता की गन्ध भी नहीं है।

वेद, वैदिक-समाज, वैदिक सिद्धान्त, और वेदाचार्य महर्षि दयानन्द के प्रति उन के हृदय में इतना अधिक सम्मान-भाव था कि लोग उसे पागलपन की सीमा तक पहुँचा हुआ कहा करते थे। परन्तु धर्म के लिये काम करने वाले और, मर मिटने वाले तो पागल होते ही हैं। यदि पागल न हों तो वे भी अन्य दुनियादारों की तरह रहें। पण्डित जी का पागलपन एक शुभ और पावन-पागलपन था।

६ मार्च सन् १८९७ को सायंकाल के समय एक पथभ्रष्ट मुसलमान ने, जोकि शुद्धि का बहाना करके आया था. धोखा देकर, पण्डित जी के पेट में छुरा घोंप दिया। हत्यारा भाग गया। पण्डित जी को बचाने के सभी सम्भव उपचार किये गये; परन्तु सब व्यर्थ। रात को दो बजे गायत्री-मन्त्र का जाप करते हुए, धर्म वीर पण्डित लेखराम जी ने इस नाशवान संसार को छोड़ा, और वे अपने सच्चे देश को चले गये। चलते समय उन्ही ने वहां उपस्थित आर्य पुरुषों को अपना यह अन्तिम आदेश दिया था कि :—

* हजरत अली इस्लाम के चौथे ख़लीफ़ा, सदाचारी विद्वान् और उत्साही धर्म प्रचारक थे।
—अनुवादक।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

तहरीर का काम बन्द न होने पाये :

आर्य पुरुषो ! विरोधियों के आक्षेपों और आक्रमणों के समुचित उत्तर देने का भार अब हम सब पर है। परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वे हमें बल और उत्साह प्रदान करें। जिस से कि हम धर्म मर्यादानुसार अपने कर्तव्य का पालन कर सकें।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

*सती का शिक्षादायक जीवन

[लेखक—स्व. स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज]

देवी लक्ष्मी का भौतिक शरीर अब कहां है ? चार जुलाई सन् १९०२ ई० के सद्धर्म प्रचारक से सभी को ज्ञात हो चुका है कि दो जुलाई सन् १९०२ ई० को देवी लक्ष्मी का देहावसान जालन्धर नगर में हो चुका है। धर्मवीर पण्डित लेखराम जी के साथ मेरा जो प्रकट-सम्बन्ध अब तक शेष चला आ रहा था, इस प्रकार उसका भी अन्त हो गया। जालन्धर की सूचना है कि देवी की श्मशान-यात्रा में आर्य पुरुषों की भीड़ बहुत अधिक थी। जालन्धर के आर्य पुरुषों ने देवी लक्ष्मी के अन्त्येष्टि-संस्कार में, बड़ी संख्या में भाग लेकर अपने एक आवश्यक कर्तव्य का पालन किया है। इसके लिये भी मैं परमात्मा का धन्यवादी हूं।

लक्ष्मी देवी का जीवन, धूम-धड़ाके का जीवन न था। इस समय तो ऐसी महिलायें भी मौजूद हैं, जिन्होंने संसार में बहुत अधिक शोर मचा रखा है। और कुछ ऐसी देवियां भी हैं जिन को कुछ लोगों ने केवल दिखावे के लिये ही प्रसिद्ध कर रखा है। इस प्रकार की स्त्रियों ने अब तक संसार के कल्याण के लिये कुछ भी काम नहीं किया है। आगे भी उन से कुछ आशा नहीं की जा सकती। परन्तु इस देश में इस प्रकार की सती स्त्रियां भी हो चुकी हैं, और इस समय की पतित अवस्था में भी कभी-कभी ऐसी सती देवियां प्रकाश में आती रहती हैं कि जिन के शुभ कर्मों और, शिव-संकल्पों ने ही इस संसार को रसातल में जाने से बचा रखा है। श्रीमती लक्ष्मी देवी भी एक ऐसी ही श्रेष्ठ सती थी।

लक्ष्मी देवी कब और कहां पैदा हुई ? उनके माता-पिता के नाम क्या थे ? उनका बचपन कैसे बीता ? इन प्रश्नों के उत्तर खोजने में हमें कोई लाभ नहीं। इतना मालूम है कि उनका जन्म मरी नगर के समीप एक पहाड़ी गांव में हुआ था। यद्यपि पता लगाकर उनके पिता और भाइयों के नाम भी लिखे जा सकते हैं, परन्तु उन से यही ज्ञात होगा कि हमारी सम्मान के योग्य देवी देहाती ब्राह्मणों के घर में अन्य सामान्य लड़कियों की तरह से ही पली थी। जो लोग धर्म-वीर पण्डित लेखराम जी के जीवन से परिचित हैं, वे जानते हैं कि जब लक्ष्मी जी की आयु सोलह वर्ष की थी तभी उनका विवाह पण्डित लेखराम जी के साथ हुआ था। विवाह के दो तीन वर्ष बाद पण्डित जी ने लक्ष्मी जी को जालन्धर में अपने साथ लाना आरम्भ किया था। मेरे साथ पण्डित जी का जो निकट-सम्बन्ध था, उसके आधार पर मैं जानता हूं कि आरम्भ से ही श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के स्वभाव में वाचालता का दोष न था। वे तो आवश्यकता से भी कम बोला करती थीं। स्वभाव में शील उच्च कोटि का था। कोई किसी प्रकार उनकी आवश्यकता वा कष्ट को जान ले, और उन का कष्ट निवारण कर दे, तो कर दे। अपनी ओर से किसी से कहना और किसी को किसी प्रकार का कष्ट देना, वे जानती ही न थीं।

विवाह के समय से ही आर्य मुसाफ़िर ने अपने मन्तव्य के अनुसार कार्य आरम्भ कर दिया

* सती से अभीष्ट आर्य मुसाफ़िर पं० लेखराम जी की धर्म पत्नी है।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

था। अर्थात् जिस उत्साह के साथ वे मौखिक रूप में स्त्री-शिक्षा का प्रचार किया करते थे, उसी उत्साह के साथ, उन्होंने अपनी धर्म-पत्नी जी को भी पढ़ाना आरम्भ किया। जालन्धर में स्त्री आर्य समाज और आर्य समाज के साप्ताहिक सत्-संगों में श्रीमती लक्ष्मी देवी जी नियम पूर्वक भाग लिया करती थीं। स्वर्गवासी आर्य मुसाफिर जी अपनी धर्मपत्नी को भी स्त्री जाति की सेवा के लिये, उसी प्रकार से तैयार करने के इच्छुक थे, जैसे कि वे स्वयं पुरुष जाति की सेवा किया करते थे। श्री पण्डित जी ने मुझे कई बार अपने भावी जीवन का कार्यक्रम बतलाया था। श्री मती लक्ष्मी देवी का वर्णन भी उसमें होता ही था। यदि वानप्रस्थ की बात करते थे, तो उसमें भी लक्ष्मी देवी जी की बातें करते थे। धर्मवीर पण्डित लेखराम जी लक्ष्मी देवी जी को क्या बनाना चाहते थे? यह उस समय-विभाग विषयक लेख से जाना जा सकता है, जो आर्य मुसाफिर की जीवन-चर्या के विवरण में सद्धर्म प्रचारक में छपा था। उस में प्रातः काल के कार्यों के सिलसले में लिखा है :—

"अग्निहोत्र को लक्ष्मी देवी जी कर लिया करें" अर्थात् गार्हपत्य-अग्नि की रक्षा का काम गृह पत्नी को सौंप कर उन्हें आर्या-प्रद की अधिकारिणी समझ लिया गया था। उसी लेख में तीसरे अनुक्रम पर लिखा है :—

"११ बजे से २ बजे तक भोजन, आराम, घरके आवश्यक काम-काज और लक्ष्मी देवी जी को पढ़ाया जाये।"

जालन्धर में ही श्रीमती लक्ष्मी देवी जी की गोद हरी-भरी हुई। और वहां ही उनको अपने प्रिय पुत्र का वियोग भी सहन करना पड़ा। देवी जी के पुत्र के रोग का एक कारण वह तैयारी भी थी जो कि वे अपने भावी सेवा-कार्य के लिए किया करती थीं। श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के स्वभाव में लज्जा और विनम्रता इतनी अधिक थी कि एक दो ऐसी स्त्रियों को छोड़ कर, जिनके साथ उनकी संकोचशीलता हट चुकी थी, अन्य अपरिचित स्त्रियों के साथ साधारण वार्तालाप में भी वे सकुचाया करती थीं।

पण्डित लेखराम जी चाहते थे कि उनकी धर्मपत्नी उन से धर्म-शिक्षा की तैयारी में, उन से सहायता लेकर, महिला-मण्डल में वैदिक-धर्म का प्रचार करे। उन्होंने मुझ से कई बार पूछा कि लक्ष्मी देवी जी का उत्साह किस प्रकार बढ़ाया जाये? मैंने परामर्श दिया कि वे उनको आर्यसमाजों के वार्षिक उत्सवों पर अपने साथ ले जाया करें। अस्तु! मेरे इस परामर्श को स्वीकार करके ही वे श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को अम्बाला छावनी और मथुरा की आर्य समाजों के उत्सवों में अपने साथ ले गये थे। जहां से लड़के को बहुत अधिक रुग्णावस्था में वापिस लाना पड़ा था। यह उल्लेख सम्भवतः सन १८९६ ई० की वर्षा ऋतु के विषय में है। इसके पश्चात् क्योंकि महर्षि दयानन्द जी के जीवन-चरित्र की छपाई का कार्य आरम्भ होने वाला था, इस लिए श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को अपने पति के साथ जालन्धर से लाहौर जाना पड़ा।

एक दुःख से तो अभी पूरा छुटकारा मिला भी न था, अर्थात् पुत्र की मृत्यु के शोक को तो वे भूलने भी नहीं पाई थीं कि एक धोकाबाज़ शैतान, उनके सामने ही, उनके प्यारे पति के पेट में छुरा घोंप कर भागने लगा। उस वीरांगना ने आगे बढ़कर हत्यारे के हाथ से छुरा छीन लेने का यत्न किया। और ऐसा करने में उनका हाथ घायल हो गया। इन घटनाओं को वे सज्जन भली प्रकार जानते हैं, जिन्हों ने मार्च सन् १८९७ ई० के समाचार-पत्रों को और उनके जोश भरे लेखों एवं समाचारों को पढ़ा है।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

अपने पुत्र और पति दोनों को ही वैदिक-धर्म की सेवा में बलिदान करके लक्ष्मी देवी जी अपनी सास के साथ अपने घर चली गईं। वहां से कुछ समय पश्चात् फिर दोनों देवियां जालन्धर में मेरे घर आईं। उस समय मुसलमानों के फ़सादी टोले में आर्य समाज के विरोध की आग बड़े ज़ोर से भड़क रही थी। और आर्य समाजियों को प्रतिक्षण अपने नेताओं तथा प्रचारकों की जान का खटका लगा रहता था। क्योंकि जालन्धर आर्य समाज के सभासद अधिक प्रभाव शाली समझे जाते थे। और जालन्धर के मुसलमानों में भी पक्षपात का दोष नाम-मात्र को भी न था, इस लिए मैं ने धर्मवीर की माता जी से निवेदन किया कि वे अपनी पुत्रवधु के साथ मिलकर जालन्धर में ही निवास करें। परन्तु माता जी को उनके सम्बन्धियों का प्रेम रावलपिण्डी की तरफ खींचता था। और लक्ष्मी देवी जी अकेली रहना न चाहती थीं, इस लिये दोनों देवियां फिर रावलपिण्डी चली गईं।

रावलपिण्डी जाकर लक्ष्मी देवी जी का स्वास्थ्य चिन्ताजनक रूप में बिगड़ने लगा। एक साधारण स्त्री भी अपने साधारण-पति के वियोग में दुःख सागर में डूब जाती है। ऐसी अवस्था में एक अत्यन्त भावुक और संवेदनाशील महिला के हृदय पर अपने धर्मवीर, साहसी और यशस्वी पति की मृत्यु का क्या प्रभाव हुआ होगा? इसका अनुमान सरलता से किया जा सकता है। दिन-रात का शोक मनुष्य को खाने-पीने योग्य नहीं रहने देता। पाचन-शक्ति बिगड़ गई। शरीर दुर्बल हो गया। दिन प्रति दिन अवस्था बिगड़ती ही जाने लगी। मुझे इन सब बातों की कोई सूचना ही न मिली। जब गुरुकुल के लिये भिक्षा मांगता हुआ मैं सन् १८९९ ई० में रावलपिण्डी पहुँचा, तब देवी के दर्शन करके, मैंने यह सब जाना और मुझे महान् दुःख हुआ। उनका शरीर सूख कर कांटा होगया था। घर में साधारण-सा सामान था, फिर भी सफ़ाई की ओर ध्यान ही न था। शोक और सन्ताप के सिवा इनका साथी और कोई भी नहीं है, मुझे यही लगा। मैं ने फिर प्रार्थना की कि माता जी इनको साथ लेकर जालन्धर आ जायें।

श्री पण्डित लेखराम जी के परिवार में मैं सब से बढ़ कर सम्मान उन के चाचा श्री पण्डित गण्डा राम जी का करता हूँ, जोकि ज़िला पेशावर में डिप्टी इन्स्पैक्टर पुलिस हैं। जब मैं उन्हीं दिनों में पेशावर गया, तब श्री गण्डा राम जी ने मुझ से मिलकर ऐसी बातें कीं कि मेरी दृष्टि में उन का सम्मान और भी अधिक बढ़ गया। उन्हों ने मुझे प्रेरित किया कि मैं श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को जालन्धर ले जाऊं। और वहां कन्या विद्यालय में उन के पढ़ने का प्रबन्ध कर दूं। साथ ही यह भी कहा कि यदि श्रीमती लक्ष्मी देवी जी अपना सब कुछ आर्य समाज को भेंट कर दें, तब भी मैं प्रसन्न हूं। क्योंकि भगवान् ने मुझे सब कुछ दे रखा है।

आर्य समाज रावलपिण्डी का वार्षिक उत्सव १७ व १८ दिसम्बर सन् १८९९ को निश्चित था। उस अवसर पर मैं फिर रावलपिण्डी गया। मैं ने फिर माता जी को प्रेरित किया। उस समय तक शायद पण्डित गण्डा राम जी भी अपना काम कर चुके थे। इस लिये माता जी ने स्वयं तो अपने सम्बन्धियों के प्रेम के कारण रावलपिण्डी छोड़ने से इन्कार कर दिया, परन्तु श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को जालन्धर जाकर रहने की अनुमति प्रदान कर दी।

उसी उत्सव पर सिकन्दराबाद की जो भजन-मण्डली रावलपिण्डी आई थी, उस ने धर्मवीर पण्डित लेखराम जी के विषय में बहुत अधिक जोशीले भजन गाये। उन भजनों को सुनाने के लिये, वह मण्डली लक्ष्मी देवी जी के पास भी गई। अपने ओजपूर्ण और वीररस में सने हुए, करुणरस भरे

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

भजनों से उस मण्डली ने गली के सभी स्त्री-पुरुषों को आठ-आठ आंसू रुलाया। बाद में मुझे पता लगा कि उन भजनों को सुन कर श्रीमती लक्ष्मी देवी बेहोश हो गई थीं। मुझे खेद है कि आर्य पुरुषों ने जो कार्य श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को प्रसन्न करने के लिये किया था, उसी ने उन के रोग को और भी अधिक बढ़ा दिया।

धर्म वीर पण्डित लेखराम जी के बलिदान के बाद ऐसे जोश भरे भजन प्रायः उन सभी जलसों में गाये जाते रहे हैं, जिन में श्रीमती लक्ष्मी देवी जी भी मौजूद होती थीं। परन्तु उन को सुन-सुन कर देवी जी प्रायः सर्वत्र ही बेहोश हो जाया करती थीं। मुझे यह रहस्य प्रथम बार तब ज्ञात हुआ, जब मार्च सन् १९०१ ई० में जालन्धर में एक विशेष सभा में, श्री पण्डित लेखराम जी के विषय में जोशीले भाषणों को सुन कर देवी जी मूर्छित हो गईं। उस समय से मैं सदा ही यह प्रयत्न करता रहा हूं कि देवी जी की उपस्थिति में किसी भी सभा, समारोह या उत्सव में धर्मवीर लेखराम जी के विषय में भाषण, कविता, गान आदि का कोई कार्यक्रम रखा ही न जाये। सन् १९०१ ई० में लाहौर आर्य समाज का जो उत्सव हुआ था, उस में भी देवी जी मूर्छित हो गई थीं। यही कारण है कि जब गुरुकुल के उद्घाटन-समारोह में कुछ भाईयों ने धर्मवीर पण्डित लेखराम जी के विषय में भजन सुनने की इच्छा प्रकट की थी, तब मैंने तुरन्त ही निषेध कर दिया था। कारण यह कि उस समारोह में श्रीमती लक्ष्मी देवी जी भी उपस्थित थीं।

हां, मैं आर्य समाज रावलपिण्डी के वार्षिक उत्सव का उल्लेख कर रहा था। अन्तिम दिन जब वेद-प्रचार के लिये अपील की गई, तब व्याख्यानदाता महोदय ने बड़े करुणाजनक शब्दों में वेद-प्रचार कार्य के लिये धर्मवीर पण्डित लेखराम जी के बलिदान का भी शब्द-चित्र प्रस्तुत किया। श्रीमती लक्ष्मी देवी जी ने उसी समय अपने कानों से सोने की बालियां उतार कर वेद-प्रचार-निधि में दे दीं। उस दान देने पर, देवी जी के सम्बन्धियों ने उस समय बड़ा शोर मचाया था, और देवी जी को उनके हाथों घोर कष्ट एवं अपमान भी सहन करना पड़ा था। परन्तु देवी जी ने अपने स्वाभाविक तपोबल के आधार पर उस कष्ट को सहन कर लिया था।

ऐसे समय में जब कि उस दान के कारण सास की तरफ़ से भी बहू के प्रति कठोरता का व्यवहार किया गया था, यह आशा नहीं की जा सकती थी कि बहू के हृदय में सास के प्रति घृणा के भाव उत्पन्न न होने पायें। परन्तु उस समय भी जब मैंने आज़माया, तो इस प्रकार की संकीर्णता से मैंने लक्ष्मी देवी जी को सर्वथा ही मुक्त पाया। जब श्रीमती लक्ष्मी देवी जी जालन्धर आने लगीं, तब यह आवश्यक हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ़ से माता जी और लक्ष्मी देवी जी को जो मासिक वृत्ति सम्मिलित रूप में निर्वाह के लिये दी जाती थी, उस का दोनों में उचित बटवारा हो जाये। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरंग सभा में भी यह प्रश्न उठा। सभा ने मुझे यह कार्य सौंपा कि मैं दोनों के निर्वाह के लिये मासिक वृत्ति का पृथक्-पृथक् रूप में उचित निश्चय कर दूं। यह तो सभी जानते थे कि निर्वाह-वृत्ति पर धर्मवीर की विधवा का ही अधिकार है। परन्तु; क्योंकि माता जी भी साथ रहती थीं, इस लिये उनका निर्वाह-व्यय भी उसी में से मिलना उचित माना गया था। सभा के सदस्य समझते थे कि शायद लक्ष्मी देवी अपने लिये आठ और माता जी के लिये पाँच रुपये मासिक की व्यवस्था करेंगी। परन्तु हम सब को यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि लक्ष्मी देवी जी ने स्वयं अपनी अन्तः प्रेरणा से ही माता जी के लिये दस रुपये मासिक स्वीकार कर लिये।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

इसके पश्चात् मैं यात्रा में रहा। और यात्रा में रहकर ही पत्र द्वारा श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को जालन्धर जाने के लिये प्रेरित करता रहा। अन्त में जब गुरुकुल के लिये भिक्षा का काम पूरा करके मैं ८ अप्रैल सन् १६०० ई० को वापिस जालन्धर पहुँचा, तब मैंने देखा कि श्रीमती लक्ष्मी देवी जी पहले ही वहां पधार चुकी हैं। उन के निवास का प्रबन्ध श्री लाला नगीनामल जी के मकान में कर दिया गया। और उन्हों ने कन्या महाविद्यालय में नियमपूर्वक पढ़ना आरम्भ कर दिया। पढ़ने का दृढ़-संकल्प करके लक्ष्मी देवी जी ने थोड़े समय में ही अच्छी प्रगति कर ली। परन्तु बीमारी के कारण उनकी शिक्षा में बारम्बार विघ्न पड़ता रहा।

उन दिनों मेरी भावज और मेरी पुत्रियां प्रायः प्रति दिन श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को अपने साथ लेकर सैर करने के लिये जाया करती थीं। और इस प्रकार उनकी पाचन-शक्ति एवं उनके शारीरिक बल को बढ़ाने व सुरक्षित रखने के प्रयत्न किये जाते थे। क्योंकि अकेली होने के कारण वे प्रायः एक ही समय भोजन बनातीं और उसे ही दो बार खाती थीं, इस लिये उनका स्वास्थ्य पूर्णतया सुधर न सका। उनको प्रायः प्रति सप्ताह पेट में बहुत अधिक दर्द हो जाता था। और अफ़ारे तथा कोष्ठबद्धता के कारण भारी कष्ट सहना पड़ता था। कभी-कभी तो पिचकारी के बिना मलविसर्जन ही न कर सकती थीं। यह सब होने पर भी उन्होंने सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका के कुछ अंश भली प्रकार पढ़कर समझ लिये। इन के साथ ही उन्होंने सामान्य पढ़ाई और हिसाब की शिक्षा भी जारी रखी। चिकित्सा-पद्धति लक्ष्मी देवी जी ने उस विशेष श्रेणी में सीखी थी, जो कि श्री लाला देवराज जी ने श्री पण्डित विश्वनाथ जी से जारी करवाई थी। उस श्रेणी में पढ़ने वालियों में से यदि किसी ने कुछ लाभ उठाया, तो वह केवल लक्ष्मी देवी जी ने ही। नाड़ी की परीक्षा करना वे भली प्रकार जान गई थीं। कुछ औषधियों के गुण दोष और प्रयोग भी समझ चुकी थीं। सामान्य शिक्षा का क्रम चल ही रहा था। वे बहुत कुछ करने का प्रयत्न करती थीं, परन्तु आये दिन की बीमारी कुछ करने ही न देती थी।

उनकी कठिनाई और स्वास्थ्य की दुर्बलता आदि सब बातों पर विचार करके, मैंने अपनी पुत्रियों के साथ अपने ही घर पर श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के रहने-रखने की व्यवस्था की। मेरी बड़ी पुत्री वेद कुमारी जी के साथ उन का प्रेम बहुत अधिक था। तभी मुझे और भी अच्छी तरह से यह जानने का समय मिला कि श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के विचार कैसे शुभ और उत्तम हैं ? मैंने भी उनके उच्च विचारों को उत्साहित किया। और प्रसिद्ध चिकित्सक श्री डाक्टर गंगा राम जी से नियम पूर्वक उनका इलाज करवाना आरम्भ किया। उनका स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन सुधरता गया। मेरी पुत्रियों के साथ ही लक्ष्मी देवी जी भी सत्यार्थ प्रकाश के कठिन-सन्दर्भ मुझ से पढ़ने लगीं। संस्कृत का भी आरम्भ कर दिया। कुछ आरम्भिक ज्ञान के बाद ऋजु पाठ के साथ ही लघु-कौमुदी पढ़ने का भी विचार कर लिया। परन्तु मैं एक ओर तो उन दिनों गोपीनाथ वाले मुकद्दमे में फंसा हुआ था, दूसरे मेरी पुत्री के विवाह की तैयारी भी जारी थी। इस लिये मुझे पढ़ाने का अवसर कम ही मिल पाता था। ऐसा होने पर भी लक्ष्मी देवी जी स्वयं अपने यत्न और अपनी प्रतिभा से ही सराहनीय उन्नति कर रही थीं। एक अवसर पर श्रीमती लक्ष्मी देवी ने उन्हीं दिनों मुझ से कहा था कि यदि दो वर्ष तक संस्कृत व्याकरण और धर्म ग्रन्थों को इसी प्रकार पढ़ने का अवकाश और मिला, तो वे कन्या आश्रम जालन्धर का कार्य-भार सम्भाल लेंगी। और कन्या महाविद्यालय में अध्यापन कार्य भी भली प्रकार से कर सकेंगी।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

उन्हीं दिनों मुझे गुरुकुल की सेवा का भार सौंपा गया। और मुझे समय से पहले ही लक्ष्मी देवी जी से कन्या आश्रम का कार्य सम्भालने के लिये प्रार्थना करनी पड़ी। उन्होंने मेरी प्रार्थना को बिना ननुनच के स्वीकार कर लिया। दिसम्बर सन् १९०१ ई० के मध्य में उन्होंने कन्या आश्रम जालन्धर का कार्य आरम्भ कर दिया। तब मुझे पता चला कि उनके अन्दर प्रबन्धकार्य की कैसी ऊँची योग्यता मौजूद है। मैंने तो पहले इस बात की ओर ध्यान ही न दिया था कि चुपचाप रहने वाली एक साधारण-सी दिखाई देने वाली यह देवी अपने अन्दर इतनी बड़ी शक्ति को धारण किये हुए है। और वह कन्याओं पर पूरा नियन्त्रण रख कर, उन से प्रेम करते हुए, उनकी उन्नति में बहुमूल्य सहयोग भी दे सकती है।

दिन रात काम अधिक और आराम कम करने के कारण उनको जुकाम तो मेरे सामने ही हो गया था। ७ जनवरी सन् १९०२ ई० को मैं जालन्धर से चला आया। उस समय से श्रीमती लक्ष्मी देवी जी लाला सोमनाथ जी मैनेजर कन्या आश्रम के साथ आश्रम का काम करती रहीं। श्री सोमनाथ जी को यह मालूम न था कि वे अपनी बीमारी का हाल बतलाया ही नहीं करती हैं। जब जनवरी के अन्त में मैं फिर जालन्धर गया, तब मुझे लक्ष्मी जी की बीमारी का हाल मालूम हुआ। मैंने श्री सोमनाथ जी का ध्यान उधर दिलाया। उस दिन से लाला सोमनाथ और उनकी धर्मपत्नी जी ने उनकी खबर लेनी शुरू की। जिस प्रेम और श्रद्धा से उन दोनों ने लक्ष्मी जी की सेवा की है, उसके लिये आर्य जनता को उनका धन्यवाद करना चाहिये। लाला सोमनाथ जी ने सेवा करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। परन्तु बीमारी बढ़ती ही चली गई। यहां तक अवस्था बिगड़ी कि वे दिन में तीन-तीन बार मूर्छित होने लगीं। फरवरी के अन्त में मैं फिर वहां गया। उस समय वे और भी अधिक दुर्बल हो चुकी थीं। परन्तु उस समय तक भी कुछ न कुछ पढ़ने का क्रम चल ही रहा था इसके पश्चात् लक्ष्मी देवी जी ने बहुत दुर्बल होने पर भी गुरुकुल के उद्घाटन-समारोह में सम्मिलित होने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

फ़रवरी के अन्त में मेरे वहां जाने पर उन्होंने यह विचार प्रकट किया था कि उनके पास जो तीन हज़ार रुपये मौजूद हैं, उनमें से दो हज़ार रुपये वे धर्मार्थ कार्यों में दान देना चाहती हैं। गुरुकुल-भूमि में वे मेरी छोटी पुत्री को अपने साथ लेकर आई थीं। आते ही वे कनखल में बीमार हो गईं। वहां पहुँचने पर गंगा-स्नान से उन्हें कुछ लाभ भी हुआ। ज्वर हट गया। परन्तु वह पुराना दर्द फिर आरम्भ हो गया। डाक्टरी उपचार से आराम न हुआ, तब श्री पण्डित गंगा दत्त जी की दवा दी गई। दो ही दिन में उस दवा से अच्छा लाभ पहुँचा। मुझे विश्वास हो गया कि पण्डित जी की दवा और गंगा-जल से उनको अवश्य ही पूर्ण लाभ हो जायेगा। उस समय यहां पर पूर्णतया अभाव था, सुख-सुविधा और साधन-सामग्री का। सब का निवास तम्बू-डेरों में था। तथापि मैंने लक्ष्मी देवी जी से अनुरोध किया कि वे कुछ समय तक गुरुकुल-भूमि में रहें। और अपने स्वास्थ्य को सुधारें। स्वयं लक्ष्मी देवी जी को भी बड़ा स्वास्थ्य लाभ प्रतीत हो रहा था। और वे भी समझती थीं कि उस दवा से अवश्य ही उन्हें पूर्ण लाभ हो जायेगा। फिर उन्हें गुरुकुल के काम और मेरी कठिनाइयों का ध्यान आया। इस पर उन्होंने यहां से जाना ही उचित समझा।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

उनके उस समय के उच्च भाव को मैं कभी भी भूल न सकूंगा। उनके शब्द ये थे—"भाई जी! यदि ईश्वर को मुझे जीवित रखना है, और मुझे अपनी बहिनों की सेवा के योग्य बनाना है तो यहां भी मैं अपने कर्मों का फल भोगने के बाद अवश्य ही स्वस्थ हो जाऊंगी। परन्तु यहां रहने से तो आप का सारा ध्यान, जो गुरुकुल की सेवा में लगना चाहिये, बट जायेगा।"

इसी उत्सव पर लक्ष्मी देवी जी ने एक छात्रवृत्ति देने के लिये वह अपना दो हजार रुपया भी गुरुकुल को दान में दे दिया। जब उन्होंने मुझ से अपने दान की बाबत कहा, तब मैंने उन्हें फिर भली प्रकार सोच विचार करने की प्रेरणा की थी। और साथ ही यह भी जतलाया कि लोग कहेंगे कि क्योंकि ये जालन्धर में रहती थीं, इस लिये मैंने इस बात का लाभ उठाकर उनका दो हजार रुपया अपनी संस्था के लिये ले लिया है। परन्तु देवी जी ने मेरी बात अनसुनी कर दी फिर मैंने पण्डित रामभजदत्त जी प्रधान आर्य प्रति निधि सभा पंजाब से, जो कि इस उत्सव में पधारे हुए थे, श्रीमती लक्ष्मी देवी जी के दान के संकल्प का हाल बतलाया। उन्होंने भी मुझे यही परामर्श दिया कि मैं लक्ष्मी देवी जी को पुनरपि विचार करने की प्रेरणा करूं। मेरे दूसरी बार विचार करने को कहने पर वे बोलीं—"भ्राता जी! जीवन का भरोसा नहीं है। न जाने कब प्राण निकल जावें? यदि संसार के कहने का ही विचार किया जायेगा, तब तो शायद कोई भी शुभ कार्य न हो सकेगा।" इस दान की सूचना जनता को देते हुए पण्डित रामभजदत्त जी ने कहा था :—कि वे आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब को प्रेरित करेंगे कि सभा दो हजार रुपये में ही एक स्थायी छात्र-वृत्ति आर्य मुसाफ़िर के नाम पर गुरुकुल को देने की व्यवस्था करे।"

गुरुकुल के उद्घाटन-समारोह से जब लक्ष्मी देवी जी जालन्धर लौटीं, तब वहां प्लेग की महामारी फूट पड़ी थी। दूसरे ही दिन वे लाहौर चली गईं। और वहां से सीधी रावलपिण्डी के लिये रवाना हुईं। वहां जाकर, उनका स्वास्थ्य और भी अधिक बिगड़ गया। बीमारी का प्रकोप एक तरफ़ था। दूसरी तरफ दो हजार रुपया गुरुकुल को दान दे देने पर सम्बन्धियों की ओर से लानत फटकार और तानों की भरमार थी। दिन प्रति दिन हालत बिगड़ने लगी। दस्तों और ज्वर ने आ घेरा। लक्ष्मी जी जानती थीं कि मैं गुरुकुल के कामों में व्यस्त हूँ। इस लिये मुझे उन्हों ने अपने हाल की कोई सूचना ही न दी। परन्तु लाला सोमनाथ जी को उन्होंने लिख दिया कि—"यदि उनकी प्राण-रक्षा करनी है, तो किसी को भेज कर उन्हें जालन्धर बुलवा लिया जाये।" यहां फिर एक कठिनाई सामने आई। श्री सोमनाथ जी आश्रम से पृथक् होकर रोपड़ जारहे थे। अतः उन्होंने लिख भेजा कि यदि लक्ष्मी जी उनके परिवार के साथ रोपड़ चल कर रहना स्वीकार करें तो वे वहां पर आजीवन उनकी सेवा करते रहेंगे। श्रीमती लक्ष्मी देवी जी ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

श्री लाला सोम नाथ जी ने सत्य धर्म प्रचारक प्रेस के सहायक प्रबन्धक लाला बस्ती राम जी को बुलवाया कि वे जाकर श्रीमती लक्ष्मी देवी जी को अपने साथ ले आयें। मैं यह लिखना भूल गया हूँ कि पण्डित लेखराम जी के जीवनकाल से ही लाला बस्ती राम जी के परिवार पर पण्डित जी और लक्ष्मी देवी जी को बड़ा विश्वास था। ७ जून को लाहौर जाते समय मुझे जालन्धर के रेलवे स्टेशन पर लाला बस्ती राम जी मिले। और वे मेरे साथ ही लाहौर तक की यात्रा करके रावलपिण्डी चले

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

गये। ६ जून को मैं लाहौर से जालन्धर पहुँचा। श्रीमती लक्ष्मी देवी जी भी पधार चुकी थीं। मैं उनके दर्शन के लिये गया। उनकी दुर्बलता को देख कर मुझे भारी आघात लगा। चेहरे पर यक्ष्मा के लक्षण स्पष्ट थे। उसी समय श्री डाक्टर गंगाराम जी को बुलवाया गया। और नियमानुसार इलाज होने लगा।

श्री लाला सोमनाथ जी अपने परिवार समेत १५ जून को रोपड़ जाने के लिये तैयारी कर चुके थे। परन्तु डाक्टर जी की राय में श्रीमती लक्ष्मी देवी जी की स्थिति यात्रा के कष्ट सहन करने योग्य न थी। डाक्टर गंगाराम जी ने स्टैथोस्कोप के द्वारा स्वास्थ्य-परीक्षा करके यह सन्देह प्रकट किया कि उन्हें राजयक्ष्मा रोग है। और शायद प्रभाव फेफड़ों पर भी पहुँच चुका है। तब सिविल सर्जन डाक्टर स्मिथ साहिब को भी बुलाया गया। उन्होंने भली प्रकार परीक्षा करके जिगर की बीमारी बतलाई। वे आशा के स्थान पर निराशा का वातावरण बनाकर चले गये। दवाइयों, अनुपानों और पथ्य के चक्कर चलने लगे। परन्तु उनके जीवन की सन्ध्या वेला समीप आती चली जा रही थी। जब जीवन ही समाप्त होने वाला था, तब मानव-प्रयत्नों से क्या लाभ होता?

मुझे लौटकर शीघ्रातिशीघ्र गुरुकुल में पहुँचना चाहिये था। परन्तु कई कारणों से मुझे जालन्धर में ही ठहरना पड़ रहा था। एक मुख्य कारण लक्ष्मी देवी जी का रोग भी था। उन्हें मुझ पर बहुत अधिक भरोसा था। वे समझती थीं कि मेरे जालन्धर में रहने से उनका इलाज उचित रूप में हो सकेगा। मैं भी उनकी सेवा को अपना धर्म समझता था। एक तो इस लिये कि उनको धर्मवीर पण्डित लेख राम जी आर्य मुसाफिर की धर्मपत्नी होने का गौरव प्राप्त था। दूसरे इस लिये कि उनके शील स्वभाव और सद्गुणों को मैं व्यावहारिक रूप में उत्तम देख चुका था। और मैं हृदय से उनका सम्मान किया करता था।

उन का शरीर दिन प्रतिदिन घुलता जा रहा था। मेरे सामने भी शीघ्र ही इधर पहुँचने की जल्दी थी। मैंने चिकित्सा का प्रबन्ध श्री लाला वज़ीर चन्द्र जी को सौंपा। रात की गाड़ी से चलने की तैयारी की। रात को मेरे चलते समय लक्ष्मी जी का स्वास्थ्य अधिक बिगड़ गया। मैंने यात्रा स्थगित कर दी। फिर सवेरे की गाड़ी से चलना चाहा। साथी-संगी बोले कि मैं उनको बिन मिले ही चल दूं। फिर निश्चय हुआ कि मिलकर जाना ही ठीक है। चलते समय मैं उनको मिलने गया। नमस्ते का उत्तर देकर इस से पहले ही कि मैं कुछ बोलता, वे बोलीं—"आप गुरुकुल को कब जायेंगे?"

उत्तर में मैंने कहा:—"मैं तो जाने के लिये तैयार होकर ही आया हूं। यदि मेरी आवश्यकता हो तो मैं ठहर जाऊं।"

देवी ने उत्तर दिया—"आप की वहां ज़रूरत है आप जाइये।"

मैं अन्तिम नमस्ते कह कर चल दिया।

मेरे चले आने के पश्चात् उनकी अवस्था दिनप्रतिदिन अधिकाधिक बिगड़ती चली गई। पहले तो लक्ष्मी जी को अपने स्वस्थ होने की कुछ आशा हो गई थी। मुझे सूचना पहुँची थी कि

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

जब कुछ भी लाभ न समझ कर डाक्टर गंगा राम जी की दवा बन्द कर दी गई, तब उन्होंने कहा था कि डाक्टर को बुला दो। और यह भी कहा था कि यदि बाबू जी यहां पर होते तो वे अवश्य ही बड़े डाक्टर को बुला देते। परन्तु ३ जुलाई को उन्हें भी विश्वास हो गया कि अब तो चलो चली की बात है। इसी लिये उन्होंने कुछ भद्रपुरुषों को बुला कर, उनके सामने अपनी सम्पत्ति के विषय में अपनी अन्तिम वसीयत भी लिखवा दी। जो कि अक्षरशः श्री बाबू अमर सिंह जी बी. ए. वकील ने लिख ली।

उस वसीयत के अनुसार उन्होंने दो हज़ार रुपया तो पहले ही गुरुकुल को दे देना स्वीकार किया। अपने सब भूषण, जो लगभग सात-आठ सौ रुपये मूल्य के होंगे, चार सौ रुपये नकद समेत उन्होंने अपनी सास को दिये, जो कि पहले ही जालन्धर आ चुकी थीं। एक सन्दूक में से कुछ रेशमी कपड़े और चालीस रुपये के दो करेंसी नोट तथा आठ रुपये नकद थे। ये उन्होंनें एक अनाथ बालिका को भेंट कर दिये, जिसका कि विवाह होने वाला था। शेष सब रुपया, जो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पास जमा था, जो शायद छः सौ रुपये था, वह लेखराम-स्मारक-निधि में भेंट कर दिया। इस वसीयत के करने के बाद दूसरे दिन उनकी वाणी भी बन्द हो गई। और ३ जोलाई को उनके प्राण पखेरू उनके देह रूपी पिंजरे को तोड़ कर उड़ गये। आर्य पुरुषों ने वैदिक रीति से उनका अन्तिम संस्कार कर दिया।

लक्ष्मी देवी जी का जीवन सचमुच ही सती का जीवन था। अपने हृदय में ही सीमित रखकर जितना कष्ट उन्होंने सहन किया, उतना लेखों में पढ़ने वाले हम लोग कुछ भी अनुमान नहीं लगा सकते। सती ने अपना काम पूरा किया और चल दी। हमारे शोक और सहानुभूति की उन्हें अब क्या परवाह है? और क्या आवश्यकता? इस में सन्देह नहीं कि पूर्ण मुक्तावस्था को वे न पहुँच सकीं, परन्तु इस में भी सन्देह नहीं कि वे अपने भावी जन्म में इस जन्म के संस्कारों के अनुरूप अवश्य ही उत्तम जन्म धारण करेंगी। और अपने अधूरे काम को पूरा करेंगी।

देवी! तुम्हारे शुभ-संकल्प ऐसे तो न थे कि पूरे ही न होते। परन्तु इस अभागे देश के भाग्य ही ऐसे न थे कि तुम्हारे सहयोग से इस का कल्याण होता। प्रिय पाठक वृन्द! उस सती का जीवन चरित्र आजकल की तड़क-भड़कदार जीवनियों जैसा तो नहीं है। परन्तु क्या इस से आपको कुछ भी शिक्षा नहीं मिल सकती? क्या आप यह भी नहीं सोच सकते कि उस देश की अवस्था बहुत ही अधिक खराब होगी, जिस में अपने अन्दर परोपकार का उत्कट भाव रखकर भी एक शिव-संकल्प वती देवी अपनी शुभ-कामनाओं की पूर्ति न कर सकी?

सच्ची सहानुभूति आजकल इस देश में कहां है? वैदिक-धर्म की सच्चाइयों और अच्छाइयों का डंका बजाते हुए भी हमारे जैसे पतित आर्य समाजियों में धर्म के गौरव को अनुभव करने का विशुद्ध भाव कहां है? इस सामाजिक अवस्था में समाज-सेवा की ओर अग्रसर होने का साहस कोई कैसे कर सकता है? ऐसा वीर पुरुष कौन है, जो सारे संसार के विरोध एवं व्यंग वाणों की मार, तथा घर वालों के तानों को सहन करके धर्म-पालन में दृढ़ रह सकता है। इस सारे अन्धकार में मुझे एकही चमत्कार दिखाई देता है। और वह है, श्रीमती लक्ष्मी देवी जी जैसी सतियों की सहनशीलता। उनका

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

प्रभाव उनके साथ ही समाप्त नहीं होता; अपितु वह आने वाली सन्तति को भी प्रभावित किया करता है। वह चिरस्थाई होता है।

हे दयानिधे ! यदि हमारी की हुई इच्छापूर्ण हो सकती है, और यदि अपने दुष्कर्मों का दण्ड यह देश भोग चुका है, तो दिवंगता लक्ष्मी देवी जी की आत्मा को फिर ऐसी अवस्था में पैदा करो कि वह इस जन्म से भी चौगुनी तैयारी करके अपने उद्देश्य को पूर्ण कर सके।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

आर्य हिन्दु और नमस्ते की खोज

समय की क्रान्ति इस सीमा तक आ पहुँची है और अविद्या ने वह दिन आ दिखलाया है कि लोगों को अपने यथार्थ नाम आदि का ज्ञान भी नहीं रहा। श्रेष्ठ, विश्वव्यापी, सभ्य और वास्तविक नाम भुला कर एक गुमनाम, कृत्रिम, असभ्य और अनुचित कलंक से हमारे भाइयों को मोह और प्रेम होगया है। सच्चे और वास्तविक नाम का आदर और परिचय दूर होकर उस का जानना व मानना भी हट गया। अविद्या ने यहां तक डेरा डाला कि आर्य के स्थान पर हिन्दु तथा आर्यावर्त के स्थान पर हिन्दुस्थान कहने और कहलवाने लगे। शोक ! महा शोक !!

इस दृष्टि से उचित प्रतीत हुआ कि अति विस्तार के साथ उनकी व्याख्या करके सत्यासत्य पर पूर्ण प्रकाश डाला जाए। जिस से विरोधियों को कुछ कहने का अवसर न रहे। ज्ञात हो कि हम आर्य लोग इस हिन्दुस्तान और हिन्दु नाम को कई कारणों से बुरा समझते हैं। जैसा कि :—

(१) हमारी जाति का हिन्दु नाम किसी संस्कृत पुस्तक में लिखा हुआ नहीं। वेदों से शास्त्रों प्रत्युत पुराणों से ले कर सत्यनारायण की कथा (जो बहुत थोड़े समय की रचना है) तक भी कहीं इस नाम का चिह्न नहीं मिलता। अतः हमारा नाम हिन्दु नहीं।

(२) कभी किसी दैनिक स्मृति पत्र, तिथि पत्र, रोज़नामचा, बही, जन्मपत्री, टेवा आदि में भी हिन्दु, हिन्दी, हिन्दुस्थान के नाम नहीं लिखे गए। जिस से विशेषतः सिद्ध है कि हम हिन्दु नहीं हैं।

(३) हमारे साहित्यिक ग्रन्थों में भी जो इसलामी युग से पूर्व की रचना हैं और इसलामी पुस्तकों में भी यह शब्द प्रयुक्त नहीं हुए। यहां तक कि किसी धार्मिक अथवा जातीय प्रथा रीति के अनुसार इस समय तक हिन्दु आदि शब्द प्रयुक्त नहीं हुए। अतः किसी प्रकार स्वीकार नहीं कि हमारा हिन्दु नाम हो। पादरी टामस हावल (अपनी आर्य हिन्दु शब्द व्याख्या में) लिखते हैं कि यह हिन्दु शब्द उस नदी के नाम से बना है जो सिन्धु कहलाती है। क्योंकि प्रायः शब्द जो संस्कृत भाषा से फ़ारसी भाषा में आगए हैं, वे इस प्रकार से परिवर्तित पाए जाते हैं। उदाहरणार्थ सप्ताह से हफ़्तह, दशम से दहम, सहस्र से हज़ार। इसी प्रकार सिन्धु हिन्दु हो गया हुआ प्रतीत होता है जिसका अभिप्राय है कि सिन्धु के तट निवासी लोग।

(उत्तर) पादरी जी इतना तो मानते हैं कि यह शब्द फ़ारसी भाषा का है। परन्तु संस्कृत से आया हुआ है अर्थात् संस्कृत के सिन्धु से हिन्दु बना है। ऐसा मानने में ज्ञात हो कि यह भी ठीक नहीं। क्योंकि यूनानी लोग रोम, ईरान और अफ़ग़ानिस्तान के मार्ग से आर्यावर्त में आए थे। मार्ग में जैसा किसी देश का नाम था वही प्रयुक्त किया। 'स' अक्षर का 'ह' अक्षर से परिवर्तित होना हम ने माना। परन्तु फ़ारसी में संस्कृत किसी प्रकार नहीं। संस्कृत में सिन्धु शब्द नदी को कहते हैं। (देखो निघंटु १/१३ तथा उणादि कोष १/११) परन्तु सिन्धु शब्द कभी आर्यावर्त निवासियों के लिये प्रयुक्त नहीं हुआ।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

और न उचित है। किन्तु फ़ारसी कोषों की दृष्टि से जो इस शब्द के अर्थ हैं। वह इस के लिये सहायता कर सकते हैं। जैसे :—

"सिन्द-दर फ़ारसी बकसरे सीन बमानी हरामज़ादा व बद व शरीर व काफ़िया मअ़यूब।"

(अज़ कशफ़ व सिराज, मुन्तख़िब व ग़यास व बुरहान व लतायफ़ुल्लुग़ात)

अर्थात् कशफ़, सिराज, मुन्तख़िब, ग़यास, बुरहान और लतायफ़ आदि कोषों में लिखा है कि सिन्द शब्द फ़ारसी में 'स' के नीचे सियारी लगा कर लिखा जाता है जिस के अर्थ हरामज़ादा, बदमाश और शरारती आदि दोष युक्त हैं।

क्योंकि सीमा के लोग सीमापार के लोगों को लूट लिया करते थे अतः उन का नाम सीमापार वालों ने सिन्धु अथवा हिन्दु रखा। दोनों शब्द फ़ारसी भाषा में पर्यायवाची हैं। उस देश की बोल-चाल में चोरों द्वारा तोड़ी दीवार के सुराख़ को सीन्ध अथवा सन्ध कहते हैं। अफ़ग़ानी भाषा में नदी को सीन कहते हैं और यह दीवार तोड़ने वाले चोर का नाम भी है। यह सिन्धु अथवा हिन्दु नाम किसी भले मनुष्य का नहीं तो आर्यों का नाम कैसे हो सकता है ? अतः आप का यह कथन भी ठीक नहीं।

पादरी—सम्भव है कि यह हिन्दु नाम संस्कृत के शब्दों "हीनदोष"=निर्दोष से बना हो। सम्भव है कि बहुत प्रयोग के कारण कुछ अक्षर छूट गए हों जैसे हिन्दुस्थान को हिन्दोस्तां कहते हैं। बुद्धि भी मानती है कि हिन्दुओं के पूर्वज लोग बुद्धिमान् थे। उन्हों ने निर्दोष अर्थ वाले हिन्दु शब्द को जाति के लिये प्रयुक्त किया होगा।

(उत्तर) आप का कृत्रिम सम्भव संस्कृत की दृष्टि से सर्वथा असम्भव है। क्योंकि संस्कृत के किसी कोष अथवा इतिहास से इस का ज्ञान नहीं होता। अतः आर्यों के पूर्वजों द्वारा प्रचलित यह नाम नहीं है। प्रत्युत दूसरी जातियों का आर्यों के लिये गाली प्रदान है। स्थान शब्द भी सर्वथा असम्भव और अनुपयुक्त है क्योंकि एक फ़ारसी और दूसरा संस्कृत का है।

इस बात के मानने से किसी को इनकार नहीं कि जिस प्रकार और भाषाएं संस्कृत से निकली हैं उसी प्रकार संस्कृत के स्थान से फ़ारसी का स्तान बना है परन्तु अरबिस्तान, अफ़ग़ानिस्तान, फ़िरंगिस्तान, इंग्लिस्तान, जाबलिस्तान, बलोचिस्तान, तुर्किस्तान, गुलिस्तान, बोस्तान, दबिस्तान, ताकिस्तान, नख़लिस्तान, चमनिस्तान के समान हिन्दोस्तान भी है। कोई शब्द इस में से छूटा हुआ नहीं है। अतः आप का यह कथन भी केवल निराधार है कि यह हिन्दुओं का आविष्कार है। नहीं, यह विदेशियों का आरोप है। और इस के अधिक प्रयोग का कारण इस्लाम है। जिस की सिद्धि में प्रमाण यह हैं :—

हिन्दु शब्द के विभिन्न प्रयोग

(१) हज़रत मुआविया की माता का नाम हिन्दिया था क्योंकि वह काले रूप वाली थी। (मसालिब)

(२) हिन्द बिल्कसर नाम ज़ने कि क़ातिले अमीर हमज़ह बूदा अस्त (मुन्तख़िब)

अर्थ—हिन्द (सयारी के साथ) एक स्त्री का नाम है जो अमीर हमज़ह की हत्यारी थी। (मुन्तख़िब नामी कोष)

(३) हिन्दु दर मुहावरा फ़ारसियां ब मअ़ने दुज़दो रहज़नो ग़ुलाम मे आयद। (ग़यास)

अर्थ—हिन्दु शब्द फ़ारसी भाषा के अनुसार चोर, डाकू, रहज़न (मार्ग का लुटेरा) और ग़ुलाम (बन्दी) के अर्थों में आता है। (ग़यास नामी कोष)

Haridil Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

(४) हिन्दु ज़न, ज़ने साहिरा रा गोयन्द यअ़नी जादूगरनी औरत। (ग़यास, करीम)
अर्थ—हिन्दुज़न का अर्थ साहिरा (जंगली) औरत (जादूगरनी स्त्री) है। यह ग़यास और करीमुल्लुग़ात नामी कोषों में लिखा है।

(५) हिन्दु यअ़नी हिन्दुस्तान या दवात (स्याही)। (कशफ़)
अर्थ—हिन्दु शब्द का अर्थ हिन्दुस्तान और दवात (स्याही) है। (कशफ़ नामी कोष)

(६) हिन्दु ए पीर। ज़ुहुल कि दर आसमाने हफ़तुमस्त व पास-बाने मुल्कस्त व रंग सियाह दारद। अगर पासबाने हिन्द कि एशांरा सादही गोयन्द रंग स्याह मे बाशद। (कशफ़)
अर्थ—हिन्दू पीर का अर्थ ज़ुहल सितारा है जो कि सातवें आकाश पर है और देश का रक्षक है। इस का रंग काला है। यदि इस का अर्थ भारत का रक्षक लिया जाए तो इन्हें साध कहते हैं और इन का रंग काला होता है। (कशफ़)

(७) हिन्दुए चर्ख़ हफ़्तुम बिल्कसर यअ़नी ज़ुहुल कि नहस व स्याह अस्त। (कशफ़ बुरहान)
अर्थ—हिन्दु जो कसर (सियारी) के साथ लिखा जाता है इस का अर्थ ज़ुहुल सितारा है जो काला और मनहूस है।

(८) हिन्दुए बारीक बीन व हिन्दुए सपहर हफ़्तमी व हिन्दुए कुनन्द गरदाना ज़ुहुल। (कशफ़)
अर्थ—बारीक दीखने वाला अथवा सातवें आकाश वाला अथवा गर्दिश करने वाला ज़ुहुल सितारा है। (कशफ़)

(९) हिन्दु ए-तो बिल्कसर, ग़ुलाम व बन्दा ए तो। (कशफ़)
अर्थ—हिन्दु ए तो का अर्थ तेरा दास और तेरा बन्दी है। (कशफ़ नामी कोष)

(१०) हिन्दु बकसर ग़ुलाम व बन्दह, काफ़िर व तेग़। (कशफ़)
अर्थ—हिन्दु का अर्थ ग़ुलाम, क़ैदी, काफ़िर और तलवार है। (कशफ़ नामी कोष)

(११) चार हिन्दु दर यके मसजिद शुदन्द, बइरे ताअ़त राकअ़ो साजिद शुदन्द॥
अर्थ—चार हिन्दु एक मसजिद में रुकूअ़ और सिजदा करने के लिये इकट्ठे हुए।

(१२) ज़ुल्फ़ दिलबन्दश, सबा रा बन्द दर गरदन निहद।
बा हवा दारान राहरौ हीलाये हिन्दु बबीं॥
अर्थ—उस की काली ज़ुल्फ़ जो दिल को बान्धने वाली (मन को मोहने वाली) है वह प्रातः कालीन वायु के गले में फन्दा डालती है। उसके निकट से चलने वालों के साथ इस "हिन्दु" काले रंग वाली ज़ुल्फ़ का फ़रेब (मोहपाशया धोखा) देखो।

(१३) अगर आं तुर्क शीराज़ी बदस्त आरद दिले मा रा।
बख़ाले हिन्दुवश बख़शम समरक़न्दो बुख़ारा रा॥
अर्थ—यदि वह शीराज़ी तुर्क (मेरा प्रियतम) हमारे दिल को हमारे हाथ में दे दे। तो मैं उसके काले तिल पर समरक़न्द और बुख़ारा को वार दूं।

Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

www.aryamantavya.in

(१४) ख़ाजा रा बूद हिन्दु बन्दाये।
परवरीदा करदह ओ रा ज़िन्दाये॥ (मसनवी रूमी)

अर्थ—एक हिन्दु (काला आदमी) एक धनी मानी व्यक्ति का नौकर था। उस धनी ने अपने नौकर का पालन-पोषण कर के उसे जीवन प्रदान किया अर्थात् उसे जीवन भर पाला।

(१५) दो हिन्दु बर आयन्द ज़े हिन्दोस्तान।
यके दुज़्द बाशद यके पासबान॥ (निज़ामी)

अर्थ—दो हिन्दु हिन्दुस्तान से आए। उन में एक चोर था। दूसरा चौकीदार (निज़ामी)

(१६) दो हिन्दुए अज़ पस संगे सर बर आवुर्दन्द। (गुलिस्तान)

अर्थ—दो चोर चट्टान के पीछे से निकले।

(१७) हिन्दुए लफ़ज़ अन्दाज़मी मे आमोख़्त, हकीमे गुफ़्त तुरा कि ख़ाना नीं अस्त बाज़ी न ईनस्त (गुलिस्तान)

अर्थ—एक हिन्दु (काले रंग वाला आदमी) आतिशबाज़ी सीखता था। एक विद्वान् ने उसे कहा (शिक्षा दी) तेरे लिये कि जिस का अपना घर घास फूस का है यह खेल नहीं है अर्थात् आसान काम नहीं। भाव यह है कि इस से तुम्हारी अपनी भी हानि होने की सम्भावना है।

(१८) चे हिन्दु हिन्दुए काफ़िर चे काफ़िर, काफ़िरे रहज़न।
चे रहज़न रहज़ने ईमान (चमन बेनज़ीर)

अर्थ—हिन्दु क्या है? हिन्दु काफ़िर है। काफ़िर क्या है? काफ़िर रहज़न है। रहज़न क्या है? रहनज़ ईमान पर डाका मारने वाला है। (चमन बेनज़ीर)

(१९) ख़ाले न बर आरिज़ आं शाहिद मस्तअस्त। हिन्दु बच्चा अस्त कि ख़ुर्शीद परस्त अस्त॥

अर्थ—उस मेरे प्रियतम के मुख पर वह काला तिल नहीं प्रत्युत हिन्दु बच्चा है जो सूर्य की पूजा करता है।

(२०) जहां हिन्दवस्त तारख़तस्त न गीरद।
बगीरश सुस्त तासख़्तस्त न गीरद शीरीं॥ (ख़ुसरो)

अर्थ—यह संसार मन का काला और चोर है सावधान रहना कि कहीं यह तेरा सामान उठा कर ही न चलता बने। इस दुनिया को ढीला पकड़ (इस के साथ अधिक प्यार न रख) ताकि यह तुझे सख़्ती से अपने पाश में न जकड़ ले।

(२१) दो गेसुअश दो हिन्दुए रसन बाज़।
ज़ि शमशाद सरावाज़श रसन साज़॥ (ज़ुलैख़ां)

अर्थ—इस (प्रियतमा) की दो ज़ुल्फ़ें दो काले रंग की बाज़ीगर हैं। जो इसके लम्बे मांडील कद से रस्सियां बांधे हुए हैं।

(२२) यके ख़ाल सियाह जा कर्द बर कुंज बर लबे लालश।
तू गोई बर लबे आबे बक़ा बनिशस्त हिन्दुए॥

अर्थ—एक काले रंग के तिल ने उसके लाल गुलाल होंठों के एक कोने में अपना स्थान बना

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

लिया है। इसे देख कर तू कहेगा कि जीवन दाता जल (अमृत) के स्रोत के तट पर एक काला आदमी (हिन्दु) बैठा हुआ है।

(२३) कुनद दर पेश पाए आं निगारे सज्दाहा ज़े नफ़स ।
बले कारे बेह अज़ आतिश परस्ती नेस्त हिन्दुए ॥ (दीवान ग़नी)

अर्थ—इसकी ज़ुल्फ़ें उस (सुन्दर मुखड़े वाले) प्रियतम के चरणों पर नतमस्तक हो गिर रही हैं। हां किसी हिन्दु (काले) के लिये अग्नि पूजा से बढ़ कर कोई अन्य काम नहीं हो सकता।

(२४) मन आं तुर्क सियाह चश्मम बरीं बाम ।
कि हिन्दुए सफ़ैदत शुद मरा नाम ॥ (शीरीं ख़ुसरो)

अर्थ—मैं इस कोठे (मकान की छत) पर काली आंखों वाला (श्वेत वर्ण) तुर्क हूँ कि लोग मुझे तेरा श्वेत वर्ण वाला हिन्दु (गुलाम, बन्दी) कह कर पुकारते हैं।

यही हिन्दु शब्द फ़ारसी, अरबी, इबरानी आदि भाषाओं में लगभग इन्हीं अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। ऐसी कोई पुस्तक होगी जिसमें यह शब्द इन अर्थों में न आया हो। जिस से प्रत्येक प्रकार से सिद्ध है कि यह नाम हमारा नहीं। सर्वथा त्याग करने के योग्य और शत्रुता तथा विरोध से रचा गया है। जैसा कि हमारे यहां उनके किये यवन और म्लेच्छ आदि नाम मिलते हैं।

पादरी—संस्कृत भाषा में आर्य और फ़ारसी भाषा में ईरानी दोनों शब्द एक ही धातु "आर" से निकले आर्य और ईरानी के वास्तविक अर्थ हल चला कर खेती करने वाले के हैं। वास्तव में यह नाम आर्य जाति के लोगों का उस समय था जब वे केवल खेती करके हलवाही करने से रोटी कमाते थे।

उत्तर—खेद है कि जिन को धातु का ज्ञान भी नहीं वे भी आक्षेप करने पर उद्यत हो जाते हैं। संस्कृत में आर कोई धातु नहीं है। ऋ धातु से आर्य और अर्य नाम बने हैं। इसी से फ़ारसी-पहलवी-में ईरानी शब्द बना है। परन्तु आर्य और अर्य भी एक नहीं। वह अन्य "ऋ" से बना है और यह अन्य से। आर्य शब्द समस्त जाति (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) का नाम है। और अर्य केवल वैश्यों के कार्य (मनुस्मृति अ० १ श्लो० ९०) में पशु-रक्षा, दान देना, यज्ञ करना पढ़ना, व्यापार करना, व्याज लेना, खेती करना सात काम लिखे है। पंजाबी में कहावत है कि,

उत्तम खेती मध्यम व्यापार ।
निखद चाकरी भीख मंगार ॥

आर्य शब्द के अर्थ संस्कृत भाषा में विद्वान्, श्रेष्ठ, बुद्धिमान्, धार्मिक, ईश्वरभक्त आदि के हैं। मैक्समूलर जी ने ऐसा ही लिखा है।

"आर्य के अर्थ बुद्धिमान्, विद्वान्, देवता और श्रेष्ठ सदाचारी तथा देवों का मान करने वाला है क्योंकि यह शब्द दस्यु का अपवाद है।"

(साइंस आफ़ लैंग्वेज पृ० २७५)

सभी आर्य कभी खेती नहीं करते थे। आरम्भ काल से ही इन को चार भागों में विभक्त किया गया है। जिस की आज्ञा वेदों में है। इसी आज्ञा पर ही इस सामाजिक विभाजन का संगठन है। अर्थात्

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

विद्या का पढ़ना, यज्ञ करना, कराना, दान देना लेना, जो मुख्य कार्य हैं उनका कर्ता ब्राह्मण, विद्या का पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना, देश और जाति की रक्षा करना जो कार्य बाहुबल पर अधारित हैं उसका कर्ता क्षत्रिय और उपरि व्याख्यानुसार देशाटन करके व्यापार करने वाला वैश्य तथा विद्याहीन सेवक का नाम शूद्र है। सदैव आर्य जाति में वैश्य खेती करने वाले रहे अथवा खेती करने वालों का पद वैश्य रहा। परन्तु समस्त मनुष्यमात्र का कार्य ईश्वरीय नियमानुसार केवल खेती करना नहीं है। अन्यथा युद्धविद्या, देशरक्षा, सेवा, परोपकार कौन करे? और यही विभाजन ईरानी जाति में भी इसी प्रकार सामाजिक रूपेण वर्तमान है।

दबिस्ताने मज़ाहिब, ज़न्दावस्ता आदि में इसका स्पष्ट वर्णन और समर्थन है। मैक्समूलर के कथन से भी स्पष्ट है कि पारसी लोग भी आर्यावर्त से चलकर ईरान में बसे थे। (साइंस आफ़ लेंग्वेज पृ० २८८)

इतिहास में भी ऐसा ही लिखा है कि प्राचीन यूनानी, रूमी, इंगलिश, फ्रांसीसी, जर्मन और फ़ारिस आदि के समस्त पूर्वज आर्य थे। (देखो तारीख़ें हिन्द)

अतः उचित है कि आप इस भूल का भी सुधार करें और इस प्रकार के काल्पनिक विचारों का परित्याग करें।

पादरी—जैसा कि हमारे पंजाब में भी खेती करने वाले "अराईं" कहलाते हैं।

(उत्तर) श्री मान् जी! अराईं शब्द संस्कृत का नहीं, पंजाबी का है। जहां तक विचार से देखा जाए। अराईं नाम वाली जाति मुसलमान ही है। हिन्दु कोई नहीं। जिस से यह परिणाम निकलता है कि यह उनका नाम अरबी के राई से बिगड़ा हुआ है। बहुत थोड़े परिवर्तन से जो कुछ गले के बल से बोलने की कठिनता के कारण उस का राईं अथवा अराईं हो जाना कुछ भी कठिन नहीं। गयासुल्लुग़ात में लिखा है कि राईं शब्बान, निगहबान "यअ़नी चरानंदाए चार पायान।" अर्थात् अ़रबी भाषा का है। संस्कृत का नहीं।

पादरी—इस पेशा के लोग पशुओं और बैलों पर अत्याचार करते हैं। मूक पशुओं को अपनी छड़ी से जिस के सिर पर एक लोहे की नोकदार कील लगी होती है, चुभो २ कर हांका करते हैं। इसी कारण सम्भवतः उन्हें अराईं कहा जाता है, वह नोकदार कील आर कहलाती है।

(उत्तर) श्रीमान् जी! यह इन निर्दयी मूर्खों का बहुत अत्याचार है और धर्मशास्त्र की दृष्टि से ऐसे लोग दंडनीय हैं। जैसा कि महाराजा जम्मू, कपूरथल्ला, नाभा, जीन्द, जोधपुर आदि में कोई इस का प्रयोग नहीं करता। और करने वाला दंड पाता है।

(देखो रणवीर दंड विधान)

बटाला में भी कुछ हिन्दु मुसलमान ईसाइयों के यत्न से "अंजमन हमदर्दी हैवानात" अर्थात् "पशु सहायक सभा" बनी हुई है। सरकारी क़ानून भी ऐसे लोगों के दंड के लिये बना हुआ है।

(देखो ऐक्ट ५ सन् १८६९ ईस्वी धारा ३४)

"आर" शब्द भी संस्कृत का नहीं, फ़ारसी का है। जैसा कि आरह काबुल, अफ़ग़ानिस्तान, पेशावर में लकड़ी चीरने, जूती सीने वाले लोहे के औज़ार को कहते हैं। सम्भवतः फ़ारसी के इन शब्दों से ही इन निर्दयी मूर्खों ने यह शब्द सुन सुना कर प्रचलित किया हो तो आश्चर्य नहीं।

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

पादरी—अतः जब इस जाति ने धीरे २ विद्या, कलाकौशल, व्यापार में उन्नति की तो आर्य नाम को, जो केवल खेती करने वालों के लिये विशिष्ट था, छोड़ दिया और इस आर्य नाम की अपेक्षा हीनदोष को जो धीरे २ हिन्दु हो गया है अपनी जाति पर प्रचलित कर लिया है और यह हिन्दु आर्य नाम की अपेक्षा अधिक शोभा पा गया है।

(उत्तर) आप का यह आक्षेप भी सर्वथा अयुक्त है। कभी किसी संस्कृत अथवा प्राकृत के विद्वान् ने यह हिन्दु नाम अपनी जाति के लिये प्रचलित नहीं किया। परन्तु पराधीनतावश बाधित हो कर मुसलमानों के समय में फ़ारसी का प्रचलन हो जाने के कारण दफ़्तरों (राजकीय कार्यालयों) में यह नाम लिखा जाने लगा। और अन्त में समस्त देश मुसलमानों का हिन्दु (ग़ुलाम) हो गया। आप का यह कथन कि जब इस जाति ने धीरे २ विद्या, कलाकौशल, व्यापार में उन्नति की तो आर्य नाम को छोड़ दिया, सर्वथा असत्य और व्यर्थ तथा छल कपट पूर्ण है। जब तक विद्या, कलाकौशल व्यापारादि में उन्नति रही तब तक आर्य नाम रहा और जब से आलस्य प्रमाद आदि दोषों ने घेरा। विद्या कलाकौशल व्यापार तथा दूर देश पर्यटन से वञ्चित हुए तब हिन्दु, काफ़िर, ग़ुलाम, असभ्य बन गये। जैसा कि इतिहास भी बताता है कि आर्य लोग सदैव से फ़िलासफ़ी के विद्वान् रहे। हिन्दसा, गणित, ज्योतिषादि के गुरू भी यही हैं। इसी कारण से वह आर्य अर्थात् श्रेष्ठ कहलाते थे। ईरान का बादशाह दारा भी आर्य होने का गर्व करता था कि मैं आर्य हूँ और आर्यों की सन्तान से हूँ क्योंकि उस के परदादा का नाम एरियारनमिया था (देखो साइंस आफ़ लेंग्वेज मैक्समूलर कृत पृ० २८०)

पादरी—जो कहते हैं कि यह नाम हमारी जाति का हमारे शत्रुओं अर्थात् मुहम्मदियों ने रखा है वह केवल भ्रम ही नहीं प्रत्युत धोखा है।

(उत्तर) क्योंकि यह नाम हमारी किसी धार्मिक पुस्तक, इतिहास और किसी विद्या सम्बन्धी पुस्तक में किसी स्थान पर नहीं लिखा। और विरोधियों, विधर्मियों तथा विदेशियों की पुस्तकों में सैंकड़ों स्थानों पर है जिस के कुछ उदाहरण हम ने उपस्थित पीछे दिये हैं। अतः इसी पर भी आप के इनकार को हम जानबूझ कर मूर्खता के अतिरिक्त और क्या कहें? और यह इस लिये कि आप आर्य जाति के लोगों को सत्य वैदिक धर्म से वञ्चित रखकर छल कपट युक्त खुशामद करके ईसाई बना लिया करें और उन को आर्य नाम से घृणा हो जाए। पादरी जी ने एक कपट जाल बिछा कर उन को पथ-भ्रष्ट करना चाहा अन्यथा और कुछ नहीं।

अतः प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष जान सकता है कि यह नाम हमारे विरोधियों की पुस्तकों में (चाहे वह ईरानी, अफ़ग़ानी, यूनानी, एराबी अथवा रूमी हों) विद्यमान है। तो उन का कथन नितान्त भ्रम और असत्य है। जिस पर हमें कहना पड़ा कि पादरी जी ने छल कपट का कार्य किया तथा सत्य से मुख मोड़ा है। हम उन को चैलंज करते हैं कि वह अथवा उन का कोई और इल्हामी मित्र...मिर्ज़ा गुलाम अहमद आदि हिन्दु नाम किसी संस्कृत की पुस्तक में से बताए और प्रमाण दे। अन्यथा यह धोखाबाज़ी की ज़ंजीर यहूदा असकर्यूती और यज़ीद की भान्ति कयामत तक छली कपटी के गले में रहेगी।

पादरी—क्योंकि यह नाम इन पुस्तकों में पाया जाता है। जो मुहम्मद जी की उत्पत्ति से बहुत पहिले लिखी गई थीं (जैसे अस्तर की पुस्तक जो हज़रत मुहम्मद की उत्पत्ति से एक सहस्र वर्ष पूर्व

Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

www.aryamantavya.in

लिखी हुई थी) उस के पहले अध्याय की पहली आयत में हिन्दोस्तान है। इसी प्रकार फ़लादेस जोसफ़र यहूदी इतिहासकार भी अपनी पुस्तक में हिन्दोस्तान का नाम लिखता है जो मुहम्मद साहिब की उत्पत्ति से ६०० वर्ष पूर्व हुआ है (देखो उस पुस्तक का अध्याय ५) अतः स्पष्ट है कि मुहम्मद साहब की उत्पत्ति से बहुत पूर्व यह देश हिन्दुस्तान के नाम से प्रसिद्ध था। सम्भवतः उस के निवासी हिन्दु कहलाते थे।

(उत्तर) यह प्रमाण भी आपके विश्वास का समर्थन नहीं कर सकता। क्योंकि हमारा विश्वास यह है कि हमारी पुस्तकों में हमारा नाम हिन्दु नहीं है। और न यह संस्कृत का शब्द है। शेष रहा अस्तर में अथवा यहूदी इतिहास में इसका होना। अस्तर नाम की पुस्तक सिकन्दर के काल के लगभग बनी है। (देखो अस्तर की किताब इब्रानी बाईबल पृ० ११८७ छापा १८७८ ईस्वी लंडन, मसीह से ५२१ वर्ष पूर्व)।

दूसरी पुस्तक मसीह के पश्चात् की है। जहां तक खोज हो चुकी है। संभवतः यही काल है जब से यह बुरा नाम हमारे और हमारे देश के लिए विदेशियों ने प्रचलित किया। क्योंकि आपके कथन से भी हमारी बात की सिद्धि होती है जो आपके लिए हानिकर है। यतः हमारे यहां प्रसिद्ध है कि यह नाम यूंही लोगों ने बना लिया है, जो विदेशियों की पुस्तकों में पाया जाता है। हमारे देश की पुस्तकों में कहीं नहीं पाया जाता।

(प्रश्न) हिन्दु नाम इन्दु से बना है। इन्दु चन्द्रमा को भी कहते हैं अर्थात् चन्द्रवंशी लोग।

(उत्तर) हम मानते हैं कि इन्दु चन्द्रमा को कहते हैं। परन्तु संस्कृत में यह किस प्रकार बन गया। इसके अतिरिक्त क्या समस्त हिन्दु चन्द्रवंशी अथवा सूर्यवंशी हैं, ब्राह्मण वैश्य शूद्र नहीं हैं? और इन्दु केवल चन्द्रमा को कहते हैं? वंशज कहां से आगया? और किस के अर्थ हुए? और यह नाम इस धातु से निकला हुआ किसी भी संस्कृत पुस्तक में आज दिन तक उल्लिखित नहीं है क्या चन्द्रवंशियों के अतिरिक्त और लोग अपने आप को हिन्दु नहीं कहते अथवा सूर्यवंशी से कोई और नाम निकला है? और क्या आप के अतिरिक्त संसार भर में किसी और को यह ज्ञात है? जब कि इन सब बातों में कोई भी ठीक नहीं तो आप का यह प्रश्न भी निराधार है क्योंकि अब तक चन्द्रवंशी सूर्यवंशी आदि सैंकड़ों गोत्रों की जातियां आर्यावर्त में विद्यमान हैं परन्तु हिन्दु का चिह्न तक भी नहीं।

अब कुछ थोड़े से इस बात के प्रामण भी दिये जाते हैं कि हमारा आर्य नाम किन २ पुस्तकों में लिखा है। प्रमाण की पुष्टि के लिए मूल के साथ पुस्तक आदि का नाम भी लिखा जाता है :—

संख्या (१) ऋ० १-१०३-३ में आर्य शब्द है।

(२) विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्।

(ऋ० १-५१-८)

(३) नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोतरणाय च।
नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च॥

(यजु० १६-४२)

(४) आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्यो रार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥ (मनु २-२२)

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

(५) मुख बाहूरु पज्जानां या लोके जातयो बहिः ।
म्लेच्छवाचश्चार्य वाचः सर्वे ते दस्यवः स्मृताः ॥ (ममु० १०-४५)

(६) न्याय दर्शन १-१० पर वात्स्यायन भाष्य

(७) केवल मामक भाग धेय पापापर समानार्य कृत सुमंगल भेषजाच्च ।
(अष्टाध्यायी ४-१-३०)

(८) इन्द्र वरुण भव शर्व रुद्रमृड हिमारण्य यवन मातुलाचार्याणामानुक् ।
(अष्टाध्यायी ४-१-४९)

(९) इस पर काशिकाभाष्यः— आर्य क्षत्रियाभ्यां चार्याणी आर्या ।
(गीता २-२)

(१०) अनार्य जुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमजु न

(११) श्रुतं प्रज्ञानुगमस्य प्रज्ञा चैव श्रुतानुगा ।
अस्मिन्नार्य..... (महाभारत उद्योगपर्व)

(१२-१६) हितोपदेश में कई स्थलों पर आर्य शब्द प्रयुक्त हुआ है । विशेषतः पाँच स्थानों में तो स्पष्ट वर्णन है ।

(१७) वेद वेदांग तत्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ।
आर्यः सर्व समश्चैव सदैव प्रिय दर्शनः ॥
(रामा० बालकाड १-१४, १६)

(१८) बाली की स्त्री पति के वध हो जाने पर उसे आर्य पुत्र पुकार कर रुदन करती है ।
(किष्किन्धा काण्ड १९-२७)

(१९) आर्यपुत्र (संस्कृत इंगलिश बृहत्कोष कलकत्ता १८७४ ईस्वी पृ० १२४)

(२०) आर्य (२१) आर्यक (२२) आर्याग्र्य (२३) आर्य पवित्र (२४) आर्य प्रायः
(२५) आर्य रूप (२६) आर्य लिंगन (२७) आर्यावर्त
(२८) आर्य देश (२९) आर्य गीत (३०) आर्य

(३१) अहं आर्यः । (भविष्य पुराण) ।

(३२) देवार्य नंदन (मृच्छकटिका नाटक) ।
(शब्दार्थ भानुकोष पृ० ५०, १८७५ ईस्वी लाहौर) ।

(३३) आर्य से ईरान और आर्याना शब्द निकलते हैं ।

(३४) एरीक आर्य से बना है ।

(३५) आरमीनियों के हां उसके अर्थ शूरवीर के हैं ।
(साइंस आफ़ दी लैंग्वेज पृ० २८१) ।

(३६) जो देश आर्यों का निवास स्थान है उसका नाम आर्य है । यह ज़न्दावस्ता में लिखा है ।
(साइंस आफ़ दी लैंगवेज पृ० २८१) ।

(३७) जो तुम सुख हमारे आर्य । दियो सीस धर्म के कार्य ॥ (गुरविलास) ।

(३८) विवेक विलास ग्रन्थ में बौद्धों का मत ऐसा लिखा है :—

(३९) बौद्धानां सुगतो देवो विश्वं च क्षणभंगुर मार्य सत्वाख्य यात स्वं चतुष्टमिदं क्रमात् ।

(४०) प्रतिदिन का संकल्प :—

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे श्वेत वाराह कल्पे जम्बुद्वीपे आर्यावर्तान्तर्गते इत्यादि।

इस से प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष जान सकता है कि हमारा नाम आर्य है या हिन्दु। देश का नाम आर्यावर्त है या हिन्दुस्तान। हमने सत्य के अनुमोदन और असत्य के निवारणार्थ दोनों नामों के बहुत से प्रमाण उपस्थित कर दिये हैं। पाठक सत्यासत्य में विवेक करके देश और जाति को इन कलंकित नामों से बचाने का यत्न करें।

एक पत्र की प्रतिलिपि

श्रीमान् सम्पादक जी आर्य गज़ट नमस्ते! निम्न लेख जोकि शब्द आर्य की व्याख्या के सम्बंध में "नूर अफ़गाँ" के आक्षेप के सम्बन्ध में हैं, सेवा में प्रेषित है। अपने बहुमूल्य पत्र के किसी भाग में प्रकाशित करके सेवक को कृतार्थ करें।

पादरी जी के लिये आर्य शब्द की रीसर्च से पूर्व इस बात की खोज आवश्यक है कि सब कालों में भाषाओं की माता कौन सी है? और किस के प्राचीनतम होने की चर्चा है? पूर्णतः निश्चित है कि इस बात की रीसर्च करते ही संक्षेप और खुले रूप से देववाणी संस्कृत के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा की नित्य होने की प्रतिज्ञा और सब भाषाओं की माता होने की सिद्धि प्रमाणित न हो सकेगी। अतः जब संस्कृत ही भाषाओं की जननी है। और विचारणीय शब्द "आर्य" उसी भाषा का है तो साधारण रूपेण उसे संस्कृत ही में ढूढंना समुचित है। संस्कृत के कोष और धातु (प्रकृति) को छोड़ कर दूसरी विकृत भाषाओं में आर्य शब्द का धातु ढूँढना ठीक वैसे ही है जैसे "जमीका" की सुवर्ण से भरी कान पर बैठ कर मोर पंख से सोना निकालने की चिन्ता में सिर मारना। कुछ हो पादरी जी तो क्या समस्त भूमण्डल में कोई भी देश ऐसा नहीं जहां के विद्वान् संस्कृत की महत्ता और पुरातनता का समर्थन न करें। और बुद्धि संगत युक्तियों और प्रमाणों की ओर ध्यान दिलाने पर संस्कृत के सब भाषाओं की जननी होने के सिद्धान्त में कोई आक्षेप करें। अतः पादरी जी को यदि ज्ञात नहीं तो अब जान लें कि आर्य शब्द का धातु प्रत्यय और अर्थ निम्नलिखित है :—

आर्य-पुल्लिङ्ग अर्तु योगा आर्यन्ते वा ऋ गतो ऋ हतो रायेत इति स्वामिनि गुरौ सुहृदि श्रेष्ठ कुलोत्पन्ने पूज्ये ज्येष्ठे सङ्गते न्यायोक्ते मान्ये उदार चरिते शान्तचित्तेकर्तव्यमाचरणे कामध्य कर्तव्य मनाचरणेतिष्ठति परकृता चोर स तु आर्य इति स्मृतः।

यदि पादरी जी संस्कृत जैसी देववाणी के समझने की योग्यता न होने के कारण अथवा क्या और क्योंकी पक्षपातपूर्ण ऐनक आँखों पर लगाने से केवल आफ़टर बार्न (पीछे से उत्पन्न हुई) भाषाओं का अच्छी प्रकार अभ्यास रखते हैं तो भी आर्य शब्द के अर्थ लगभग उन भाषाओं में (जब कि वह सब संस्कृत से निकली हैं) श्रेष्ठ और उत्तम के पाए जाते हैं जैसा कि :—

(१) आर—आराये (फ़ारसी) आरास्ता करने वाला (शोभायमान करने वाला)।
(२) आरिज—(फ़ारसी) क़दर, मरतबा (मान और उच्चपद)।
(३) अरबी—बुलंद, ऊँचा।
(४) आर्यन—नाम एक कवि का।

यद्यपि आर्य शब्द की खोज संस्कृत जैसी उच्च भाषा को छोड़ कर दूसरी भाषा में करना केवल मूर्खता है तो भी दो लाभ अवश्य हैं। एक यह कि प्रत्येक भाषा में आर्य शब्द लगभग समानार्थक होने से संस्कृत की सब भाषाओं की जननी के सिद्धान्त को पुष्ट करता है। दूसरे हमारे एक अमरीकन

Vedanta Research Institute

www.aryamantavya.in

भाई के मन में आर्य शब्द के अर्थ और महत्ता यदि दूसरी भाषाओं के द्वारा सम्भव हो तो कुछ बुरा नहीं इसी लिये मैं ने अपनी इस धारणा का (कि आर्य शब्द की खोज प्रत्येक प्रकार से संस्कृत भाषा में ही होनी ठीक है) समर्थन न करके जो कुछ शब्द पर्यायवाची और समानार्थक दूसरी भाषाओं के लिखे हैं, वह केवल पादरी जी की सान्त्वना और आर्य शब्द के अर्थ उन के मन में बैठाने के लिये वैसे ही लिखे हैं कि जैसे साहब लोग अपने बच्चों को अक्षर ज्ञान कराने के लिये चित्रों से अक्षर दिखाते हैं जिस से हमारी जाति वास्तविक यथार्थ नाम और धर्म पर ध्यान देकर अज्ञाननिद्रा से जागे। और सत्पथगामी हो कर दोषों से पृथक् हो। ओ३म् शान्ति शान्ति शान्ति!

आप का शुभचिन्तक
हनुमान प्रशाद मास्टर ऐंग्लो वैदिक स्कूल
छपरानौ जिला फ़रुख़ाबाद

१ सितम्बर १८८७ ईस्वी।

नमस्ते प्रकरण

जिस प्रकार हमारे हिन्दु भाई अपना वास्तविक नाम "आर्य" भूल गये हैं। उसी प्रकार उन में परस्पर मेल जोल के समय भी अति निरर्थक, ऋषि मुनि कृतग्रन्थ-विरुद्ध और असामयिक शब्द समझे बूझे बिना प्रचलित हैं। उदाहरणार्थ जय राधे कृष्ण, जय सीता राम, राम राम, हरे राम, जय हरि, पैरी पौना, बन्दगी, पाँव लागे, मथा टेकना, नमोनारायण, असीस, जय शम्भू, जयदेवी. माता की जय, आशीर्वाद आदि।

जहां तक खोज की गई है। इन बातों का प्रमाण प्राचीन ग्रन्थों में नहीं मिलता। जिस से स्पष्ट सिद्ध है कि प्राचीन आर्य महात्मा उस समय जब कि सत्य धर्म उन्नति पर था, उन का प्रयोग नहीं करते थे। जब से इन बातों का प्रचलन हुआ है, तब से घर २ फूट, द्वेष, ईर्ष्या और झगड़े के अतिरिक्त कुछ दृष्टिगत नहीं होता। मतमतान्तरों के झगड़े, पृथक् २ इष्टदेव आदि भी इसी फूट की कृपा का परिणाम हैं। अन्यथा एक ईश्वर के भक्त होने से इन का चिह्न मिलना भी असम्भव होता। आर्यावर्त की पवित्र भूमि में दिन प्रतिदिन असत्यता और जड़पूजा का फैल जाना और दिन प्रतिदिन अवनति प्राप्त करना केवल इसी घटना चक्र का परिणाम है। जब तक बुद्धिवाद से इन व्यर्थ अपवादों का खण्डन न होगा, फूट का दूर होना असम्भव है। जहां तक सनातन ऋषि मुनि प्रणीत आर्य ग्रन्थों को देखा गया है। उन सब में "नमस्ते" का शब्द परस्पर व्यवहार और प्रणाम के लिये प्रयुक्त हुआ पाया जाता है, जो प्रेम, संगठन और सदाचार बढ़ाने के लिये समुचित है।

संभव है किसी भाई को सन्देह हो कि नमस्ते का शब्द सनातन ग्रन्थों में कहां आया है? इस के लिये आवश्यक है कि कुछ प्रमाण उद्धृत किये जाएं।

(१) ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा।
शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥
नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु।
अवतुमामवतु वक्तारम्॥ (तैत्तिरीयोपनिषद्)

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

(२) नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे ।
नमस्ते अस्त्वश्मने येना दूड्याशे अस्यसि ॥

(अथर्व १-१३-१)

(३) नमस्ते रुद्र मन्यव उतोत इषवे नमः ।
बाहूभ्यामुत ते नमः ॥ (यजु० १६-१)

(४) नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्ष मिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतिची र्दशोदीची र्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमस्तु तेनोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्चनो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥ (यजु० १६-६४)

(५) नमो नमस्तेऽस्तु सहस्र कृत्वा पुनश्च भूयो पि नमो नमस्ते ॥ (गीता ११-३९)

(६) नमः कमल नाभाय नमस्ते जलशायिने नमस्ते केशवानंत वासुदेव नमो ऽस्तु ते।

(विष्णु सहस्रनाम)

(७) वासना वासुदेवस्य चासि ...नमो ऽस्तु.....।

(विष्णु सहस्र नाम)

(८) नमो ब्रह्मणे

(विष्णु सहस्र नाम)

(९) चण्डी पाठ अध्याय ५ श्लो० ७—३४ तक

(१०) तवावबोधो भगवन नमस्ते

(शिव पुराण)

(११) जगदीश...नमो ऽस्तु (शिव पुराण)

(१२) नमस्ते रुद्ररूपाय (शिव पुराण)

(१३) नमस्ते भगवन् भूयो देहि मे मोक्षमव्ययम्

(सारस्वत सूत्र २८५०)

(१४) गुरु गोविन्द सिंह जी द्वारा रचित जापजी—पौड़ी २—४८, २४—५७, ६५—७१, १४४—१८७, १९८ ॥

(१५) नमः सत्यनारायण.....नमस्ते...।

(सत्य नारायण कथा अध्याय १ श्लो० ५२)

(१६) नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च । (यजु० १६-३२)

(१७) भविष्य पुराण में भी बहुत से स्थानों पर नमस्ते शब्द मिलता है।
स्मृतियों में भी कई स्थानों पर इस नमस्ते शब्द का प्रयोग है।

(१८) बाल्मीकी रामायण में विश्वामित्र और वसिष्ठ की एक दूसरे से अलग होने की अवस्था में नमस्ते का वर्णन है :—

नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि ।

(१९) नमस्य नमस्कारणीय (त्वी) (स्यी) पूजाता जीमकं नमस्ते...।

(शब्दार्थ भानु पृ० १८५)

(२०) सर्वानुक्रमणिका सूत्र नं० ८ वाक्य २४ में नमस्ते को याज्ञवल्क्य जी बोल चाल में प्रयुक्त करते

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

हैं। पक्षपात् और हठ का कोई इलाज, कोई नुसखा, और कोई मन्त्र धन्वन्तरि और लुक़मान के पास भी न था। जो पुरुष ध्यान पूर्वक विचार करेंगे उन पर स्पष्ट प्रमाणित हो जायगा कि नमस्ते शब्द उचित, सार्थक, श्रेष्ठ और गंभीर भाव पूर्ण है। जहां तक सोचा गया है। इससे बढ़िया और इससे अधिक कोई शब्द उपयुक्त नहीं हो सकता। अतः आवश्यक है कि हम इस प्रेम, गठन और आचार युत शब्द का प्रयोग करें। जिससे देश जाति और धर्म की अवनति का निरोध करके उसकी वृद्धि और उन्नति के लिए हम कटिबद्ध हों। और हिन्दुस्तान को परमेश्वर की कृपा से आर्यावर्त बनाएं।

पादरी जी ने टिप्पणि में लिखा है कि हिन्दु नाम फारसी में बुरा होने के कारण त्याज्य है तो राम फ़ारसी में गुलाम, सेवक और इसी प्रकार आर्य अरबी में बदले की भावना रखने वाले को कहते हैं तथा वैद्य संस्कृत में हकीम को और वेद फ़ारसी में फल रहित वृक्ष को कहते हैं। इसी प्रकार संस्कृत में अनादि के अर्थ आरम्भ रहित के है किन्तु अरबी में अनाद शत्रुता को कहते हैं। अतः ये शब्द भी छोड़ देने उचित होंगे।

इसका उत्तर हमारी ओर से यह है कि राम, आर्य, वेद और अनादि शब्द संस्कृत की पुस्तकों में सैंकड़ों स्थानों पर हैं। परन्तु हिन्दु शब्द का चिह्न तक भी नहीं मिलता। अतः पहिले नाम मानने योग्य और दूसरा त्याग देने योग्य है। यदि हिन्दु शब्द भी किसी आर्यग्रन्थ में होता तो हमें मान लेने में कोई इन्कार नहीं था। परन्तु कोई प्रमाण न होने के कारण (जैसा कि अभी तक हो चुका है।) हमें किसी प्रकार भी मानना उचित नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को उचित है कि स्वाध्याय के पश्चात् सत्य को स्वीकार करके आर्य कहलाने और नमस्ते कहने कहलाने से किसी प्रकार का भी कभी इन्कार न करें।

(पादरी) जब दयानन्द ने सुना कि फ़ारसी भाषा में आशीर्वाद के अर्थ क़ैद (बन्दी) होने के हैं। तो इस कारण से उन्होंने संस्कृत शब्द आशीर्वाद को त्याग दिया और उसके स्थान पर नमस्ते का शब्द रखा। जब कि आशीर्वाद शब्द संस्कृत में अच्छे अर्थ रखता और बहुत पुराना शब्द है। क्योंकि मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में बहुत स्थानों पर पाया जाता है। जिसका प्रयोग करना अत्यावश्यक बताया गया है। (देखो मनुस्मृति २-१२६)

(उत्तर) पादरी जी! आपने भूल की जो गुणों के भण्डार महाराज दयानंद पर अकारण दोष लगाया। स्वामी जी ने कहीं भी आशीर्वाद त्यागने की आज्ञा नहीं दी। और न कभी इस का प्रचलन किया। जो शब्द सनातन ऋषियों के ग्रन्थों में उन्होंने प्रचलित देखा और जो अत्युत्तम भी था। उसी का प्रचलन किया। और फूट का बीज बोने, सत्य और प्रेम के दूर करने वाले अनार्ष अभिवादनों को दूर किया। आप ने जो मनुधर्म शास्त्र का प्रमाण दिया है उस में आशीर्वाद शब्द नहीं है। वहां अभिवादन और प्रतिवादन है। अभिवाद सत्कार का नाम है और प्रतिवादन उस का उत्तर है। जिसे स्वामी जी ने उचित कहा है। अनुचित नहीं। (देखो वेदांग प्रकाश भाग ४ सं० २४, २५, २६,) आप का यह प्रश्न केवल छल कपट पूर्ण है। और किसी प्रकार समुचित नहीं।

पादरी—हिन्दु राजाओं और विद्वानों में से स्वामी दयानंद और उनके पंथियों के अतिरिक्त और किसी ने हिन्दु शब्द पर आपत्ति नहीं उठाई। हिन्दुओं की पुस्तकों में हिन्दु नाम का

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

प्रचलन बहुत है। उदाहरणार्थ गुरु नानक जी के आदि ग्रन्थ में बार २ इस जाति का नाम हिन्दु लिखा है। गुरु गोविन्द सिंह जी, जो फ़ारसी भाषा में अच्छी महारत रखते थे, उनको कभी यह ज्ञात न हुआ कि जिस जाति में से हम लोग हैं, उस का नाम मुहम्मदियों की ओर से बहुत ही बुरा रखा गया है। अतः वह नाम परिवर्तित किया जाए।

(उत्तर) हिन्दु राजाओं के राज कार्य में साधारण रूप से वर्ण गोत्र के अनुसार कार्यवाही होती है। और हिन्दु नाम मुसलमानों के आगमन से पूर्व सर्वथा न था। और अब भी लगभग मिट सा गया है। यदि कुछ है तो उर्दु फ़ारसी की कृपा से है। परन्तु राजाओं के संबोधन में अब भी आर्य-कुल-दिवाकर, इन्द्र, महेन्द्र आदि संस्कृत के यथार्थ पद शोभायमान होते हैं। हिन्दु सर्वथा नहीं। शेष रहा सदुपदेशक बाबा नानक देव जी महाराज के आदि ग्रन्थ साहिब में हिन्दु शब्द का होना। वह हमें स्वीकार है। परन्तु यह फ़ारसी शिक्षा का परिणाम है। और मुसलमानी राज्य का प्राबल्य भी इस का कारण है। अन्यथा ऐसा कभी न होता। उन्होंने इस शब्द का प्रयोग गर्व पूर्वक नहीं किया। प्रत्युत साधारण रूप से सद्धर्म का उपदेश पंजाबी बोली में दिया जिस से लाखों हिन्दुओं को उन्होंने मुसलमान होने से बचाया और सद्धर्म पर स्थिर रखा। (विस्तार सुरमा चश्मे आर्य के उत्तर में देखो)

शेष रहा यह कि वीरता के धनी, सत्य पूजक, युद्ध विद्या विशारद, सिंह समान, जाति के नेता श्री मान् गुरु गोविन्द सिंह जी को यह नाम बुरा क्यों न प्रतीत हुआ? यह आप की बहुत बड़ी भूल और अज्ञानता है। यदि आप को कुछ भी उनके इतिहास और उपदेशों से परिचिति होती तो ऐसा कभी न कहते। उन्होंने फ़ारसी के बहुत बड़े विद्वान् होने के कारण इसके बुरे अर्थ अच्छी प्रकार से समझ कर ही हिन्दु शब्द सर्वथा छोड़ दिया और सिख अथवा सिंह नाम व्यक्तिगत रूपेण नियत करके अपने समस्त अनुयाइयों का सामूहिक नाम "ख़ालसा-ख़ालिस-श्रेष्ठ" (जो आर्य का फ़ारसी में पर्यायवाची शब्द अथवा शाब्दिक अर्थ है) रखकर उसी के प्रयोग की आज्ञा दी।

देखो ग़यासुल्लुगात, मुन्तख़िब, कशफ़ आदि फ़ारसी कोष ग्रन्थों में लिखा है कि:—

ख़ालिस और ख़ालिसा=पाक व बे आमेज़िश (पवित्र और मिलावट रहित) गुरु जी के समस्त अनुगायी और समस्त पठित सिंह भाई हिन्दु नाम को बुरा समझते हैं। सिख और सिंह आर्यों के समझाने और ख़ालसा मुहम्मदी भाइयों को समझाने के लिये हैं। अतः आप का कथन सर्वथा प्रमाण शून्य है।

पादरी—क्या यह बात विचारणीय नहीं कि सम्राट् अकबर, जो पक्षपात शून्य थे। उन के काल में बहुत से बुद्धिमान् हिन्दु अमीर और वज़ीर (मन्त्री) फ़ारसी भाषा के ज्ञाता स्वतन्त्रता से कार्य कर चुके हैं। उस समय उन्हों ने भी इस नाम पर कुछ आपत्ति नहीं उठाई! अतः जब हिन्दुओं के महापुरुष उसी नाम का प्रचलन करते रहे हैं और अपने लिये उसे स्वीकार करते रहे हैं। और इस शब्द पर कुछ भी आक्षेप नहीं करते रहे तो क्या इस से यह प्रतीत नहीं होता कि वे इस नाम को अच्छा समझते थे न कि बुरा।

(उत्तर) यह नियम है कि जब तक दो भाषाओं का मुक़ाबला नहीं होता और जब तक इस विश्लेषण

Pandit Lekhram Vedic Mission

www.aryamantavya.in

के लिये स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती, तब तक मनुष्य दोनों भाषाओं से परिचित नहीं हो पाता और न विश्लेषण कर सकता है।

समस्त संसार जानता है कि अमीर और वज़ीर आराम चाहने वाले होते हैं अथवा राज कार्य में संलग्न रहते हैं। जिस से धार्मिक पड़ताल अथवा कुप्रथाओं को दूर करने का उन्हें अवसर न्यून मिलता है।

यह भी कोई प्रमाण नहीं कि उन्हों ने आपत्ति नहीं उठाई। हम भी आप की भाँति कहते हैं कि आपत्ति उठाई हो तो क्या सन्देह है? केवल लेख के न होने का बहाना है। इस का प्रभाव दोनों पक्षों पर समान है। वह हिन्दुओं के महापुरुष भी न थे, केवल धनी मनुष्य थे। सांसारिक प्रतिष्ठा के अतिरिक्त हिन्दु उन को और किसी मान, अथवा गर्व की दृष्टि से नहीं देखते।

पादरी—हिन्दु और आर्यों को अपने नामों के अर्थ संस्कृत भाषा में देखने चाहियें न कि फ़ारसी आदि भाषा में।

(उत्तर) प्रत्येक व्यक्ति जिस को कुछ ज्ञान हो और जिस की बुद्धि को किसी स्वार्थ ने अन्धा न कर रखा हो, वह अवश्य न्यायपूर्वक कहेगा कि हम ने जितना आर्य और आर्यावर्त के शब्दों को स्वीकार और हिन्दु हिन्दुस्तान के शब्दों को अस्वीकार किया है, वह उसी गवेषणा का परिणाम है, जो हम ने संस्कृत के अनुसार (पादरी जी के कथनानुसार) की है। क्योंकि संस्कृत में इन दो शब्दों (हिन्दु, हिन्दुस्तान) के कुछ अर्थ नहीं हैं और न किसी कोष, इतिहास, पुराण और धर्म पुस्तक में यह शब्द हैं। अतः आप के कथनानुसार भी हमें और सब देशवासियों को इन बुरे नामों का त्याग करना आवश्यक है।

हम ऐसा कभी नहीं करते कि संस्कृत शब्दों को फ़ारसी से विजित समझ कर छोड़ दें। प्रत्युत हम तो जो सच्ची बात धर्मानुसार प्रतीत होती है, उस को स्वीकार करके असत्य और बुराई का, जो विदेशियों ने हम पर थोंपी है, परित्याग करते हैं और यही आर्य समाज का चौथा पवित्र नियम है कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। अतः हम ने इस नियम को दृष्टिगत रखतें हुए आप के समस्त प्रश्नों के उत्तर निवेदन कर दिये हैं। प्रत्येक सत्य के जिज्ञासु को आवश्यक है कि बुरी बातों, बुरे नामों और बुराई से बचने के लिये पूर्ण उत्साह के साथ शीघ्र समुद्यत हो। परमात्मा सब की धार्मिक भावनाओं को सफलता दे। सब को नमस्ते।

Pandit Lekhram Vedic Mission